शिक्षाप्रद कथाएँ

1/25
511
155

आनन्दकुमार

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

शिक्षाप्रद कथाएं

[सरस एवं सजीव कथाएं]

SPS
891.433 A 48 S
25623

लेखक

आनन्दकुमार

Anand Kumar

Sh. Ghulam Mohamad & Sons.
Book-Sellers, Publishers & Stationers
Govt., Order Suppliers,
Maisuma Bazar, SRINAGAR KASHMIR.

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

Srinagar
155

@ राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

H 83.1
A 98 S

मूल्य	:	एक रुपया पचीस नये पैसे
छठा संस्करण	:	सितम्बर, १९६२
प्रकाशक	:	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
मुद्रक	:	भारत मुद्रणालय, शाहदरा, दिल्ली

Acc. No 25623
Cost Rs. 1.50
Date 20.1.66

इस पुस्तक में क्या है

इस संग्रह की प्रत्येक कहानी की आत्मा प्राचीन किन्तु शरीर नवीन है। दूसरे शब्दों में—पुरानी कहानियां नये ढंग से प्रस्तुत की गई हैं। इनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में मुझे इतना ही कहना है कि इनमें पाठकों को जीवन और व्यवहार-नीति-विषयक बहुत-सी नीरस किन्तु उपयोगी बातें भी सरस एवं आकर्षक रूप में मिलेंगी।

जिस प्रकार लोक में कभी-कभी अलौकिक घटनाएं हो जाती हैं उसी प्रकार ऐसी कथाओं में भी कहीं-कहीं चमत्कारपूर्ण बातें मिल सकती हैं। एक विचित्र बात तो यही है कि इनमें पशु-पक्षी भी मनुष्य की भांति बोलते-चालते हैं। पाठकों को उनका भाव उसी तरह ग्रहण कर लेना चाहिए जैसे किसी फल के छिलके को अनुपयोगी मानते हुए भी लोग उसके सारभाग को चाव से अपनाते हैं।

वसन्त-निवास,
सुलतानपुर (उ० प्र०) —आनन्दकुमार
१९५४

कथा-सूची

ईश्वर कैसा होगा ?	५
सत्य और त्याग की महिमा	११
आशा लगाए रखो	१५
ज्ञान का लाभ	२३
मूर्ख की पकड़	२७
उत्तेजना का फल	३०
काम के बनो	३४
समझ की भूल	४०
अनुचित चेष्टा	४४
बुद्धि का सदुपयोग	४८
अनर्थ की जड़	५३
शठ का हठ	५६
उलटी समझ का दंड	६३
विग्रह का ग्रह	६७
कुसंगति का परिणाम	७२
विश्वासघात का फल	७४
काम की देखभाल	८०
निर्लज्जता का दंड	८३
दंड कौन भोगे ?	८५
निर्बल को न सताइए	९०

: १ :

ईश्वर कैसा होगा ?

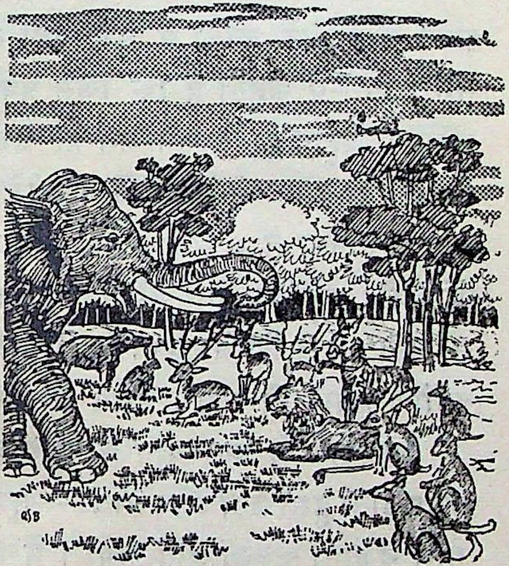

एक बार किसी वन के सब जीवों ने मिलकर ईश्वर के सम्बन्ध में विचार करने के लिए एक बहुत बड़ी सभा की। उसमें इस विषय पर कई नामी पशु-पंडितों के व्याख्यान हुए।

सबसे पहले खरगोश पंडित बोला—भोले-भाले भाइयो, मैं इस बात को प्रमाणित कर सकता हूं कि भगवान एक ऐसा जीव होगा जिसके कान भगवान जाने कितने बड़े होंगे। निश्चय ही वह लम्बकर्ण है।

इतना सुनते ही छोटे-मोटे जीव चिल्लाए—महाशयजी, गूढ़ बात कहकर हमें मूढ़ न बनाइए; आपने जो कुछ कहा है, उसकी सरल टीका कर दीजिए, नहीं तो उसका रस फीका हो जाएगा।

खरगोश फिर बोला—सावधान होकर सुनिए; अपने छोटे-छोटे कानों से मेरी बड़ी बात को सुनकर समझिए—मैं कहता हूं कि जिस प्रकार हम कुत्ते का भौंकना बहुत दूर से सुन लेते हैं, उसी प्रकार हमारा पुरखा भगवान भी स्वर्ग में बैठे-बैठे यहां की सारी बातें सुन लेता है। अवश्य ही, उसके कान बहुत बड़े होंगे और वह दिन-रात चौकन्ना रहता होगा। सीधी-सी बात यह है कि वह हमारी ही जाति का मुखिया है, क्योंकि हमारे ही लक्षण उसमें भी मिलते हैं।

खरगोश के व्याख्यान के बाद हाथी पंडित कान फड़फड़ाता हुआ उठा और बोला—मुझे खरगोशजी का गाल बजाना अच्छा नहीं लगा। मैं डंके की चोट पर कहता हूं कि मेरा परमपिता मेरे ही जैसा है। अर्थात् शुण्डाल है।

छोटे-छोटे पशु फिर चिल्लाए—श्रीमान जी, सरल भाषा बोलिए, नहीं तो हमें बड़ी निराशा होगी और हम तमाशा बन जाएंगे—भाषा का ताशा न

बजाइए ; आपकी एक माशा भाषा भी हमारी समझ में नहीं आई । इसकी टीका करके हमारे जी का भ्रम मिटाइए ।

हाथी ने फिर कहा---शान्ति, शान्ति ; विद्रोह न कीजिए । शुण्डाल का अर्थ यह है कि ईश्वर एक सूंड वाला जीव है । वह सूंड वाला न होता तो बड़े-बड़े पेड़ों को आंधी के समान कैसे उखाड़ता ! सावन-भादों में वही तो सूंड में पानी भरकर पृथ्वी पर फेंकता है। स्पष्ट ही वह मेरे जैसा है, मेरा दादा ही है ! बोलो हाथीराम की जय !

हाथी के बाद सूअर पंडित अपने दांतों को ज़मीन पर रगड़ता हुआ बोला—कैसा अंधेर है ! जो प्रत्यक्ष है, उसको भी लोग नहीं देखते-पहचानते । तुम लोगों की बुद्धि किस लड़ाई में मारी गई है ! अरे मूढ़ो ! ढूंढ़ो---पता लगाओ---समझो-बूझो---आंख बंद करके देखो ; देखो, देखो, उसका असली नमूना! गुटका संस्करण तुम्हारे सामने है । उस दन्त बहादुर के अवतार को नमस्कार करो ।

छोटे-मोटे जीव सिर खुजलाते हुए आपस में बोले---यह पंडित कहां की बोली बोलकर गोली मार रहा है ; इससे कहो, भोली बोली बोले, हमारी पोली

खोपड़ी में अपनी झोली के कंकड़-पत्थर न भरे।

सूअर ने फिर कहा—सन्तो और घोंघाबसन्तो, सुनो, जगत्-पिता एक ऐसा जीव है जिसके दांत बड़े ही चोखे-अनोखे हैं। उन्हींसे वह पहाड़ों का पेट फोड़-फाड़ डालता है। जिसे मूर्ख लोग बिजली कहते हैं, वही हमारे मां-बाप के दांत हैं। देखो न, उन्हींकी चोट से पहाड़ों की चोटियां चटाचट टूटकर चकनाचूर हो जाती हैं। मैं बुद्धि को टटोलकर, हृदय खोलकर भगवान की पोल खोलता हूं कि वह विकट दांतों वाला महापशु है।

इस प्रकार अनेक जानवरों के व्याख्यान हुए। अन्त में सिंह गरजता हुआ बोला—सुनो, सुनो, आंख, कान, जीभ, बन्द करके मेरी बातों को सुनो और चुपचाप मान लो। मेरी बात यदि तुम्हारी समझ में न आए, तो भी उसे मान ही लेना, क्योंकि मैं सबका स्वामी हूं। सौ बातों की एक बात यह है कि रामजी बड़े-बड़े पंजों वाले जीव हैं। तभी तो वे बादलों के दल को कभी-कभी नोंच-नाचकर तितर-बितर कर देते हैं। अपने पंजों से ही तो संसार में बड़े-बड़े प्राणियों का प्राण निकाल लेते हैं। उनका रूप मेरे ही जैसा है। वे मेरे जैसे न होते तो संसार के

जीवों पर राज्य कैसे करते ! बस यह तय हुआ कि ईश्वर वैकुण्ठ का सिंह है; मैं उसकी जीती-जागती मूर्ति हूं। तुम लोग मुझे अपना सर्वशक्तिमान ईश्वर मानकर पूजा करो।

सिंह की बात कौन काटता ! अंधेरा हो चला था, इसलिए उस दिन की सभा भंग कर दी गई। सब जीव-जन्तु भगवान को भूलकर पेट की चिन्ता में शिकार के लिए चल पड़े। संयोग से उस वन में उसी रात को बहुत-से जानवर फंसाने वाले लोग आए थे। उन्हें एक नये चिड़ियाघर के लिए सब प्रकार के जीव-जन्तुओं की आवश्यकता थी। पशु-पंडितों का दल रातों-रात उनके पिंजरों में जा फंसा। सवेरे तक सबके सब चिड़ियाघर में बन्द कर दिए गए।

उन जीवों के कटघरे एक-दूसरे के पास ही थे इसलिए रात होने पर वे फिर आपस में इस प्रकार बातें करने लगे :

खरगोश—मैं तो अब यही मानता हूं कि ईश्वर ठीक उसके जैसा है जिसने अपने बुद्धि-बल से मेरे जैसे फुर्तीले जीव को बंधन में डाल दिया है।

हाथी ने कहा—ठीक, ठीक, मैं भी यही मानता हूं कि वह मनुष्य जैसा कोई बुद्धिमान महाजीव है।

सूग्रर भी धीरे से बोला—हाथी भाई, सत्य कहते हो; वह सूग्रर नहीं, महापुरुष है; वह बुद्धिमान है तभी तो बड़े यत्न से सब जीवों को पकड़कर दुनिया के चिड़ियाघर में बन्द किए रहता है।

ग्रन्त में सिंह ने सिर झुकाकर कहा—ग्रब समझा! भगवान ऐसा जीव है जो शरीर से बहुत छोटा होकर भी बुद्धि से बहुत बड़ा है। वह पंजा नहीं मारता; बुद्धिमानी से सबको ग्रपनी मुट्ठी में किए रहता है। वह मनुष्य का बड़ा भाई है—भाई नहीं, पुरखा है।

इस प्रकार पशुग्रों की बुद्धि ठिकाने ग्रा गई। वे मान गए कि ईश्वर मनुष्य से मिलती-जुलती कोई वस्तु है। उनका ऐसा समझना ठीक था, क्योंकि बड़े-बड़े विद्वान भी तो यही मानते हैं कि ईश्वर ने मनुष्य को ग्रपने जैसा ही बनाया है।

: २ :

सत्य और त्याग की महिमा

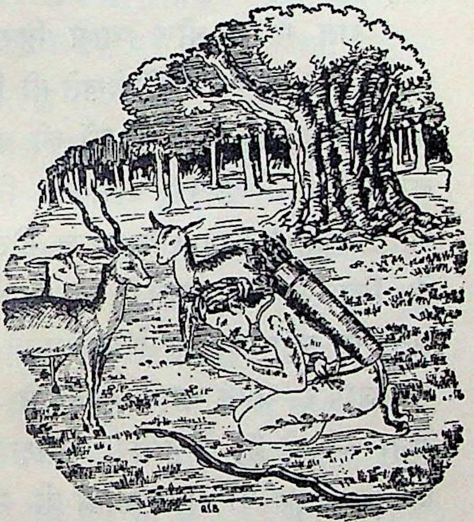

एक वन में एक सुन्दर सरोवर था; उसके तट पर बेल का एक विशाल वृक्ष था; उसके नीचे शिवजी की एक मूर्ति स्थापित थी। दिन के समय झुंड के झुंड हिरन वहां आकर चरते, जल पीते और विश्राम करते थे। संध्या होने पर अपने घरों को लौट जाते थे। वहां उन्हें किसी प्रकार का भय नहीं था; रात में भी प्यास लगने पर वे सरोवर में आकर पानी पी जाते थे।

एक दिन अंधेरा होने पर एक थका-मांदा व्याध

उस पेड़ के नीचे आया। दिन-भर दौड़-धूप करने के बाद भी उसे कोई शिकार नहीं मिला था, वह भूख से व्याकुल तो था ही, परन्तु घर पर प्रतीक्षा में बैठे हुए अपने भूखे बच्चों की चिन्ता से विशेष दुःखी था। रात में उसने कहीं जाना उचित नहीं समझा। अपना धनुष-बाण लेकर वह उसी पेड़ पर चढ़कर बैठ गया।

रात में दो-तीन प्यासे हिरन उस तालाब पर पानी पीने आए। उन्हें देखते ही शिकारी अपने धनुष पर तीर चढ़ाने लगा। पत्तों की खड़खड़ाहट से चौंक-कर हिरनों ने ऊपर देखा तो निशाना साधता हुआ व्याध दिखाई पड़ा। वे तुरन्त बोले—व्याध, एक क्षण के लिए ठहरो; हमारी एक प्रार्थना सुन लो; हम मृत्यु से नहीं डरते; लेकिन मरने से पहले एक बार घर जाकर अपने प्यारे बच्चों से अन्तिम बार मिल लेना चाहते हैं; वे हमारी प्रतीक्षा में होंगे; हमें थोड़ी देर अवकाश दो; हम शीघ्र ही उनसे मिलकर लौट आएंगे; तब जो चाहे करना।

ऊपर से व्याध बोला——मैं ऐसा मूर्ख नहीं हूं कि हाथ आया शिकार छोड़ दूं; इस समय घर पर मेरे बच्चे भूख से छटपटा रहे होंगे।

हिरनों ने फिर विनती की——मनुष्य, जैसे तुम अपने

प्यारे बच्चों का ध्यान करते हो, उसी भाव से क्षण-भर के लिए मेरे भी नन्हें बच्चों का ध्यान करो। यदि वे हमें न पाएंगे तो इधर-उधर रोते-भटकते मर जाएंगे। हम उन्हें समझा-बुझाकर सूर्योदय से पूर्व यहां अवश्य आ जाएंगे, भगवान शंकर साक्षी हैं।

व्याध ने उनकी प्रार्थना मानकर कुछ घंटों की छुट्टी दे दी। हिरन अपने डेरे पर आए। वहां उन्होंने अपने कुटुम्बियों से सारा हाल कहा और अपने-अपने बच्चों को प्रेम से गले लगाकर उन्हें भविष्य के लिए बहुत-से उपदेश दिए। सवेरा होने से पहले जब वे अन्तिम विदा लेकर चलने लगे तो उनके बाल-बच्चे भी उनके पीछे-पीछे चले। सूर्योदय से पहले ही सब उस वृक्ष के नीचे पहुंच गए। बहेलिया उनकी राह देखता पेड़ पर बैठा था। हिरनों ने पहले तो भगवान शिव को नमस्कार किया, उसके बाद अपने प्राण-द्रोही से कहा——व्याध, हम आ गए हैं, अब तुम अपने बाल-बच्चों की तृप्ति के लिए सहर्ष हमारा वध कर सकते हो, यह हमारा सौभाग्य है कि हमारा शरीर भूखे बच्चों के काम आएगा।

इतने ही में मृगछौने आगे बढ़कर बोले——व्याध, पहले हमें मारो, यदि हमारे मांस से भी तुम्हारा

और तुम्हारे बच्चों का पेट न भरे, तब इन्हें मारना; हमारे रहते इनका नाश नहीं होने पाएगा।

इस प्रकार सारा हिरन-परिवार आत्मबलिदान के लिए तैयार हो गया। सभी स्वार्थ त्यागकर कर्तव्य-पालन के लिए आतुर थे। व्याध यह दृश्य देखकर चकित हो गया। उसने दिन-भर उपवास और रात-भर जगते हुए पवित्र स्थान में वास किया था। हिरनों के सत्य और त्याग का आदर्श उसके सामने ही था। इन बातों से उसके हृदय की सोई हुई सद्भावनाएं जग गईं। उसने हिंसा का विचार त्याग दिया और सदाचारी हिरनों के आगे अपना मस्तक झुकाकर कहा—धर्मात्मा प्राणियो, मैं अब पाप-कर्म नहीं करूंगा, अपने सत्य और त्याग से तुमने मुझे भी कर्तव्य का ध्यान दिला दिया है। जिस प्रकार मुझे अपना और अपने बाल-बच्चों का जीवन प्रिय है, उसी प्रकार अन्य प्राणियों का जीवन भी प्रिय जान पड़ने लगा है। मैं अब किसीकी हिंसा नहीं करूंगा।

हिरनों के शुभ आचरण से स्वयं उनका उद्धार तो हो ही गया, उनके प्रभाव से एक पापी का जीवन भी सुधर गया।

: ३ :

आशा लगाए रखो

पूर्वकाल में एक बार किसी ब्राह्मण के इकलौते बच्चे की मृत्यु हो गई। परिवार वाले उसके शव को श्मशान में फेंकने ले गए। वहां उसे भूमि पर रखकर सब शोक से विह्वल होकर रोने लगे। बच्चे की देह से उन्हें इतनी ममता थी कि उसे सदा-सर्वदा के लिए श्मशान में त्यागने के पहले जी भरकर देख लेना चाहते थे। सब उसे घेरकर बैठ गए और देर तक रोते रहे।

तीसरे पहर वहां एक गिद्ध आया और उनसे

और तुम्हारे बच्चों का पेट न भरे, तब इन्हें मारना; हमारे रहते इनका नाश नहीं होने पाएगा।

इस प्रकार सारा हिरन-परिवार आत्मबलिदान के लिए तैयार हो गया। सभी स्वार्थ त्यागकर कर्तव्य-पालन के लिए आतुर थे। व्याध यह दृश्य देखकर चकित हो गया। उसने दिन-भर उपवास और रात-भर जगते हुए पवित्र स्थान में वास किया था। हिरनों के सत्य और त्याग का आदर्श उसके सामने ही था। इन बातों से उसके हृदय की सोई हुई सद्भावनाएं जग गईं। उसने हिंसा का विचार त्याग दिया और सदाचारी हिरनों के आगे अपना मस्तक झुकाकर कहा—धर्मात्मा प्राणियो, मैं अब पाप-कर्म नहीं करूंगा, अपने सत्य और त्याग से तुमने मुझे भी कर्तव्य का ध्यान दिला दिया है। जिस प्रकार मुझे अपना और अपने बाल-बच्चों का जीवन प्रिय है, उसी प्रकार अन्य प्राणियों का जीवन भी प्रिय जान पड़ने लगा है। मैं अब किसीकी हिंसा नहीं करूंगा।

हिरनों के शुभ आचरण से स्वयं उनका उद्धार तो हो ही गया, उनके प्रभाव से एक पापी का जीवन भी सुधर गया।

: ३ :

आशा लगाए रखो

पूर्वकाल में एक बार किसी ब्राह्मण के इकलौते बच्चे की मृत्यु हो गई। परिवार वाले उसके शव को श्मशान में फेंकने ले गए। वहां उसे भूमि पर रखकर सब शोक से विह्वल होकर रोने लगे। बच्चे की देह से उन्हें इतनी ममता थी कि उसे सदा-सर्वदा के लिए श्मशान में त्यागने के पहले जी भरकर देख लेना चाहते थे। सब उसे घेरकर बैठ गए और देर तक रोते रहे।

तीसरे पहर वहां एक गिद्ध आया और उनसे

बोला—ब्राह्मणो, तुम लोग ज्ञानी होकर भी अज्ञानियों की भांति क्यों शोक करते हो ? एक न एक दिन तो सभी को मरना पड़ता है, इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को किसीकी मृत्यु का शोक नहीं करना चाहिए। रोने-चिल्लाने से आज तक कोई मरा हुआ प्राणी जीवित नहीं हो सका। इसलिए तुम लोग व्यर्थ दुःख कर रहे हो। अब दिन ढल रहा है, इस भयावने श्मशान में रहना उचित नहीं है। देखो, चारों ओर हड्डियां-खोपड़ियां बिखरी हैं, अभी थोड़ी देर में यहां गीदड़ और प्रेत झुंड के झुंड दिखाई पड़ेंगे। तुम्हें चाहिए कि इस शव को यहीं छोड़कर अब घर लौट जाओ। जो देह अब मिट्टी हो चुकी है, उसे मिट्टी में मिल जाने दो। अब जाओ।...

गिद्ध का उपदेश मानकर ब्राह्मण लोग बड़े दुःख के साथ बच्चे के शरीर को वहीं छोड़कर लौट पड़े। उन्हें जाते देखकर एक गीदड़ अपनी मांद में से निकलकर उनके पास पहुंचा और बोला—अरे मनुष्यो, तुम लोग कैसे हृदयहीन हो ! अपने हृदय के टुकड़े को इस भयंकर स्थान में इस प्रकार छोड़कर कहां जाते हो ? पशु-पक्षी तक अपने बच्चों को इस प्रकार निर्ममता से नहीं त्यागते। तुम्हें कम से कम सन्ध्या

तक तो उस प्यारे बच्चे के पास बैठना चाहिए था ! कौन जाने किसीके भाग्य से वह पुन: जीवित हो जाए। लौटो, लौटो, अपने लाल को इतनी जल्दी धूल में मत फेंको।

गीदड़ की बात मानकर ब्राह्मण लोग फिर बच्चे के शव के पास लौट गए और उसे हृदय से लगाकर रोने लगे। गिद्ध फिर उनके पास आकर कहने लगा—अरे मूढ़ो, गीदड़ की बातों में आकर तुम लोग फिर लौट आए ! तुम्हारे विलाप से कुछ भी लाभ नहीं होगा। अब इस मोह-माया को त्यागो और जाकर अपने-अपने काम में लगो। अब यह बच्चा प्रेत हो गया है, इससे तुम्हारा क्या नाता ! इसके लिए शोक करने से तुम्हारी शक्ति नष्ट होगी। जो कुछ हो गया उसे भूलो। उसे हरि-इच्छा मानकर सन्तोष कर लो। अब यह बच्चा पुन: जीवित नहीं होगा। इसलिए तुम लोग अपने-अपने घर जाओ।

ब्राह्मण लोग फिर वहां से चल पड़े। थोड़ी ही दूरी पर उन्हें वही गीदड़ फिर मिला। उसने कहा—मतिहीन मनुष्यो, तुम लोग उस नीच गिद्ध के बहकावे में आकर क्यों लौटे जा रहे हो ! जिस बच्चे को तुम लोग प्राणों से भी अधिक प्यारा मानते थे, उसीको

इतनी निष्ठुरता से त्याग रहे हो ! तुम्हें सौ बार धिक्कार है ! अरे तुम्हें तो चाहिए था कि शाम तक उसके पास बैठकर राम-राम जपते । कौन जाने भगवान की कृपा से वह फिर जी उठे ।

ब्राह्मणों ने आपस में कहा—चलो भाई, दो-चार घंटे बच्चे के पास ही बिताएं । सब उसे घेरकर बैठ गए । इतने में ही गिद्ध फिर आकर बोला—मनुष्यो, तुम लोग किस आशा में बैठे हो ! यह मूर्खतापूर्ण प्रेम व्यर्थ है । क्या तुम इस बच्चे में जीवित होने के लक्षण देखते हो ? इसके शरीर का तेज नष्ट हो गया है, अंग-अंग ठंडे होकर अकड़ गए हैं । इसके सूखे तन-तरु को तुम आंसुओं के जल से सींचकर हरा-भरा नहीं बना सकते । मेरी आयु इस समय एक हज़ार वर्ष से अधिक है; मैंने इतने दिनों में एक भी प्राणी को मरने के बाद पुनः जीवित होते नहीं देखा । इसलिए तुम लोग इसके जीवन की आशा त्यागकर घर जाओ; मरे हुए प्रियजनों को बार-बार देखने से दुःख घटता नहीं, बढ़ ही जाता है । अब दुःख-शोक को त्यागकर इस अशुभ स्थान से चले जाओ । जीवित प्राणियों को यहां अधिक देर नहीं ठहरना चाहिए । यह प्रेत-भूमि है ।

गिद्ध के कहने से ब्राह्मण लोग फिर लौटने लगे तो गीदड़ ने मार्ग में उनसे कहा—भाइयो, ऐसा काम क्यों करते हो, जिसके लिए बाद में पछताना पड़े। अभी बच्चे का रंग नहीं बिगड़ा है, उसकी मृत्यु के पूरे लक्षण नहीं दिखाई पड़ते। तुम्हें उस धूर्त गिद्ध की बातों में पड़कर हताश नहीं होना चाहिए। मैं ऐसे अनेक प्राणियों को जानता हूं जिन्हें लोगों ने मरा मान लिया था, परन्तु कुछ देर बाद वे फिर जी उठे। हो सकता है, अभी इस बच्चे में भी कुछ प्राण हों और यह पुनः चैतन्य हो जाए। सन्ध्या तक धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करने में क्या हानि है ? घर जाकर भी तो तुम इसी तरह दुःख-शोक में डूबे पड़े रहोगे। उससे अच्छा है कि कुछ समय इस नन्हें बालक के ही पास बिताओ।

सब लोग बच्चे के पास लौट आए और उसे गोद में लेकर रोने-चिल्लाने लगे। गिद्ध ने फिर कहा—मनुष्यो, तुम लोग तो शोक से पागल हो गए हो। इस अशुद्ध देह को बार-बार छूकर तुम लोग ब्राह्मण होकर भी चांडाल बनते जा रहे हो। तुम्हारे बार-बार लौटने से इस बच्चे की आत्मा को तो कष्ट होता ही होगा, तुम्हारे दुःखों का भार भी बढ़ जाता है।

मेरी बात मानो, सैकड़ों गीदड़ अपने प्राण देकर भी इस मृत बालक को अब नहीं जिला सकते। तुम्हारे रोने और आंसू बहाने से भी इसके प्राण-पखेरू अब नहीं लौटेंगे। इसलिए रोना-धोना व्यर्थ है। अब शान्तिपूर्वक घर जाओ और इसकी आत्मा की सद्-गति के लिए दान-पुण्य करो। इसमें विलम्ब करना ठीक नहीं है।

ब्राह्मणों का दल वहां से फिर उठकर घर की ओर चला। रास्ते में गीदड़ ने पुकारकर कहा—तुम लोग कैसे आदमी हो! मैं बार-बार समझाता हूं, फिर भी नहीं मानते! मुझे ऐसा लगता है कि अभी वह बच्चा प्राणहीन नहीं हुआ है। तुम लोग उसे गिद्ध के आगे फेंककर बड़ी निष्ठुरता कर रहे हो। शाम तक तो मेरी बात मानकर बच्चे के जीवन की आशा लगा रखो। उस कुटिल गिद्ध का विश्वास न करो।

ब्राह्मण लोग पुन: बच्चे के पास लौट आए। अब गिद्ध बोला—देखो, सूर्यास्त का समय हो रहा है, अब यहां कराल भूत-प्रेत-पिशाच आएंगे, विकराल पशु चारों ओर दिखाई देंगे। तुम्हें वे भय दिखाएंगे, मार खाएंगे। तुम लोग एक मरे हुए बच्चे के पीछे व्यर्थ में मारे जाओगे। इसलिए अब असम्भव को सम्भव

बनाने की आशा छोड़ो और सकुशल घर लौट जाओ।

वे चलने लगे तो गीदड़ ने कहा—थोड़ी देर और ठहरो; जब तक सूर्य भगवान आकाश में विराजमान हैं, तब तक भूत-प्रेत और दुष्ट जीवों की शंका न करो। भगवान चाहेंगे तो सन्ध्या तक बच्चा उठ बैठेगा।

ब्राह्मण फिर रुक गए। इस प्रकार कभी तो वे गिद्ध की बातों से निराश होकर घर के लिए चल पड़ते थे और कभी गीदड़ की बातों से बच्चे के पुनर्जीवित होने की आशा करके रुक जाते थे। वास्तव में गिद्ध यह चाहता था कि वे लोग दिन रहते ही चले जाएं, जिससे बालक का शव उसीको खाने को मिले। गीदड़ चाहता था कि वे लोग शाम तक वहां रहें जिससे शव गिद्ध के पंजे में न पड़कर उसीको मिले। दोनों ही स्वार्थवश ब्राह्मणों से तरह-तरह की ज्ञान की बातें कर रहे थे। ब्राह्मण लोग उनके दांव-पेच में वहीं सन्ध्या तक उलझे खड़े रहे। सन्ध्या होने पर गिद्ध तो उन्हें धिक्कारता हुआ चला गया। गीदड़ ने शव के पास आकर कहा—मनुष्यो, अब तो संसार से सूर्यदेव भी चले गए; मुझे तो आशा थी कि वे तुम्हारे ऊपर दया करके इस बच्चे को जीवन-दान

देकर ही अस्त होंगे। परन्तु उन्होंने कृपा नहीं की; यह तुम्हारा दुर्भाग्य है। अब इसके जीने की आशा छोड़कर तुम लोग घर जाओ; मैं जहां तक हो सकेगा, इसकी रक्षा करूंगा।

ब्राह्मणों ने वहां से विदा होने से पूर्व बच्चे के सिर पर हाथ फेरकर रोते हुए कहा—भैया, हम इस आशा से अब तक बैठे रहे कि तुम्हें साथ लेकर घर लौटेंगे—अब जाते हैं।

संयोग से, उनके ऐसा कहते ही बालक का शरीर हिलने-डुलने लगा। वास्तव में, उसके शरीर में प्राण की एक चिनगारी शेष थी। उससे सारा शरीर फिर चैतन्य होने लगा। देखते ही देखते वह उठ बैठा। उसके कुटुम्बीजन हर्ष से गद्गद हो गए। भगवान ने उनकी आशा पूरी कर दी। जिस गोद में उसे उठाकर वे रोते हुए घर से आए थे, उसी गोद में उसे लेकर हंसते हुए घर लौटे।

25623

: ४ :

ज्ञान का लाभ

एक चिड़िया किसी राजा के बाग में चुपके से जाकर नित्य उसके फल खाया करती थी। राजा बहुत दिनों से उसे पकड़ने की ताक में था। संयोग से एक दिन वह जाल में फंस ही गई। राजा उसे पकड़-कर मारने चला। चिड़िया बड़ी चतुर थी। शत्रु के हाथ में पड़कर भी वह विचलित नहीं हुई। उसने धीरे से कहा—महाराज, मैंने जो अपराध किया है,

उसके लिए आप मुझे सहर्ष मृत्यु-दंड दे सकते हैं; लेकिन मरने से पहले मैं अपने पाप का प्रायश्चित्त करना चाहती हूं। मैंने आपका अब तक अहित किया है, अब आपके हित की कुछ गुप्त बातें बताऊंगी। उनसे आपका बड़ा उपकार होगा। कृपया उन्हें ध्यान से सुनिए, तब मुझे मारिए।

राजा उत्सुक होकर बोला—बोल, बोल, जल्दी उन बातों को बता दे; उसके बाद मैं तुझे मारे बिना तो आज छोड़ूंगा ही नहीं।

चिड़िया कहने लगी—सुनिए राजन, नीति की ये चार गूढ़ बातें हैं; इन्हें सदा ध्यान में रखिएगा। पहली बात तो यह है कि एक बार हाथ आए हुए शत्रु को भूलकर भी अपने चंगुल से निकलने न देना।

राजा ने प्रसन्न होकर कहा—निश्चय ही यह काम की बात है। अब दूसरी बात बताओ।

चिड़िया फिर बोली—असम्भव बात का कभी विश्वास न करना।

राजा ने फिर अपना सिर हिलाते हुए कहा—ठीक कहती हो; नीम के पेड़ में आम के फल नहीं लगते। तीसरी बात कहो··कहो, कहो, जल्दी कहो।

चिड़िया बोली--बीती बात का कभी शोक न करना ।

राजा ने इसे भी काम की बात मानकर चौथी बात के लिए आग्रह किया । तब चिड़िया बोली--महाराज, चौथी बात तो बड़े ही काम की है। मुझे आप थोड़ी देर के लिए छोड़ दें, तो मैं शान्तिपूर्वक अपने गुरुजी का ध्यान करके ज्ञान की गहरी बात आपको बता सकती हूं; उससे आपको बड़ा लाभ होगा ।

राजा ने उसे छोड़ दिया । चिड़िया उड़कर एक पेड़ पर जा बैठी और वहीं से बोली--राजाजी, मेरे पेट में बत्तख के अंडे के बराबर कई मोती हैं; आप मुझे मार डालते तो उन्हें पा जाते । लेकिन जब चिड़िया ही हाथ से निकल गई, तो मोती कहां से मिलेंगे ।

राजा हाथ मलकर पछताने लगा । मुट्ठी में आया हुआ शिकार ही नहीं, उसके साथ मोतियों का खज़ाना भी उसके हाथ से निकल गया । यह सोचकर वह दुःख से व्याकुल हो गया । उसे छटपटाते देखकर बुद्धिमान चिड़िया दूर से फिर बोली--मूर्ख, तुझे तो ज्ञान का उपदेश देना ही व्यर्थ था, क्योंकि तूने उससे

लाभ लेना नहीं जाना। यदि तू मेरी पहली बात याद रखता तो मुझे इस तरह हाथ से न जाने देता। मेरी दूसरी बात भी यदि तेरे ध्यान में होती तो तू कभी मेरे पेट में मोती होने का विश्वास न करता। तीसरी शिक्षा भी तू भूल गया, तभी तो इस प्रकार बीती बात के लिए पछता रहा है। ज्ञान की बातों को कान से सुनने से ही लाभ नहीं होता; उन्हें तो सदा ध्यान में रखकर उन्हींके अनुसार काम करना चाहिए। यदि तू ऐसा करता तो इस समय तुझे मूर्ख न बनना पड़ता।

यह अन्तिम उपदेश देकर चिड़िया चहकती हुई वहां से उड़ गई।

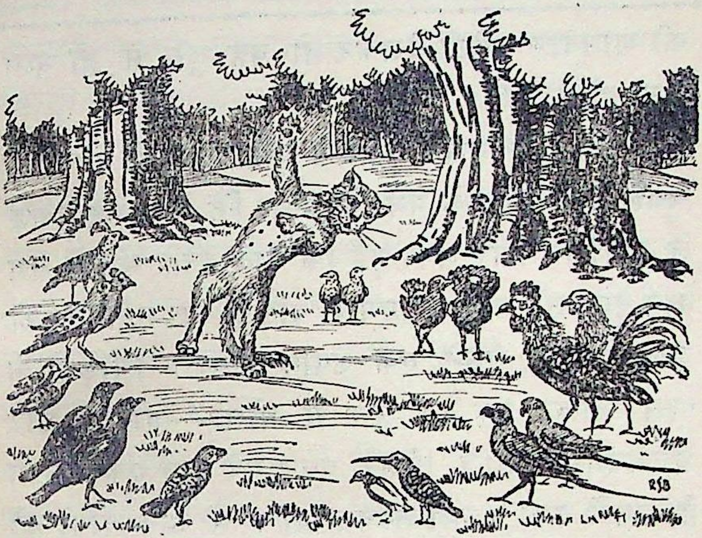

: ५ :

मूर्ख की पकड़

संसार के बचपन के दिनों की एक कथा सुनिए। उस समय के जीव-जन्तु एक-दूसरे को ठीक से नहीं पहचानते थे। एक जंगल में एक बिल्ली रहती थी। वह नित्य चूहे-चुहियों का शिकार करके अपना पेट भरती थी। उसका मन बार-बार चिड़ियों को खाने के लिए ललचाता, लेकिन डर के मारे वह उनके पास तक नहीं जाती थी। वह सोचती थी कि कहीं चिड़ियों के दांत मगर या चीते के दांतों जैसे तेज़ न हों। मुर्गे

की शानदार चोटी देखकर तो वह दूर से ही भाग खड़ी होती थी।

एक दिन उस बिल्ली ने कुछ चिड़ियों को दाना चुगते देखा। उसके मन में आया कि झपटकर पकड़ ले। लेकिन फिर शंका हुई कि यदि इनके मुंह में तेज़ दांत हुए तो फाड़ खाएंगे। दांत हैं या नहीं, इसकी जांच के लिए उसने एक उपाय सोचा। चिड़ियों के पास जाकर वह बड़े प्रेम से बोली--भाइयो और भौजाइयो! आज तीसरे पहर मेरे यहां एक जलसा है, उसमें बड़ा अच्छा नाच होगा। मैं आप लोगों को न्यौता देती हूं, अवश्य ही आइएगा।

पक्षियों ने निमंत्रण स्वीकार कर लिया। तीसरे पहर उनका दल उस पेड़ के नीचे पहुंचा, जहां चालाक बिल्ली रहती थी। कबूतरजी अपनी कबूतरी के साथ आए, काकजी काकी के साथ, सुग्गाजी सुग्गी के साथ और मुर्गाजी मुर्गी के साथ। गौरैयों की तो सारी बिरादरी ही जमा हो गई। कहां तक गिनाएं! सारा मैदान तरह-तरह की चिड़ियों से भर गया। बिल्ली ने सबको बड़े आदर-सत्कार से बैठाया। सबको नाच देखने की बेचैनी थी। उनके आग्रह से बिल्ली ने अपना नाच धूमधाम से शुरू किया। नाच क्या था! वह तो

उछलना-कूदना, लोटना-पोटना, अटकना-मटकना था। बिल्ली कभी तो ठुमकती थी, कभी चौंकती थी, कभी म्याऊं-म्याऊं चिल्लाती हुई छलांग मारती थी और दुबककर गुर्राती थी। उसका बेसिर-पैर का काम देख-कर चिड़ियां खिलखिलाकर हंसने लगीं। बिल्ली ने देख लिया कि किसीके मुंह में एक भी दांत नहीं है। उसका काम बन गया। उसने सबको अच्छी तरह पहचान लिया।

बस फिर क्या था! बिल्ली ने एकाएक नाच बन्द करके सबसे पहले छत्रधारी मुर्गे पर धावा किया। एक ही झपट्टे में कुक्कुटजी की गर्दन तोड़-मरोड़कर वह दूसरी ओर लपकी और अन्य पक्षियों को खदेड़-खदेड़कर मारने लगी। बिल्ली ने उस दिन अपनी बहुत दिनों की इच्छा जी भरकर पूरी कर ली। इसके बाद तो वह निर्भय होकर चिड़ियों का शिकार करने लगी। अब तो बिल्ली का बच्चा भी किसी चिड़िया से नहीं डरता।

मूर्ख का यह लक्षण है कि वह बिना सोचे-विचारे मुंह खोलता है, बेमौके ठहाका मारकर हंसता है, उसीसे वह पहचाना और पकड़ा जाता है।

: ६ :

उत्तेजना का फल

एक तालाब के किनारे एक पुराना इमली का पेड़ था। उस पर एक चालाक चील रहती थी। पेड़ के नीचे एक चूहा बिल बना-कर रहता था। वह कभी-कभी खाने की खोज में बाहर निकलता और सावधानी से इधर-उधर घूमकर फिर बिल में समा जाता था। तालाब में एक बड़ा मेंढ़क भी था जो कभी बाहर नहीं आता था, लेकिन वहीं से जब चाहता खूब बोलता था।

चील उन दोनों की ताक में थी, लेकिन वे किसी तरह उसके पंजे में नहीं आते थे।

एक दिन जब चूहा अपने बिल में बैठा था, चील पास आकर धीरे से बोली—मित्रवर मूषकजी, यह मेंढ़क का बच्चा तो रात भर टर्र-टों, टर्र-टों, किर्र-कों करता है; हम लोग सो भी नहीं पाते। यह तो बड़ी बुरी बात है।

चूहा बोला—कहती तो ठीक हो, बड़े बेमौके बोलता है, लेकिन हम इसको कैसे रोकें?

चील—मेरी राय में तो जब यह बोले तब आप यहीं किनारे से कंकड़ी मारना शुरू कर दें।

चूहा तैयार हो गया। इसके बाद चील चुपचाप तालाब के किनारे पहुंची और मेंढ़क को पुकारकर बोली—पानीपति, रात में तो आप ऐसा गाते हैं कि यह स्थान गंधर्वलोक बन जाता है, कान के परदे फड़-फड़ा उठते हैं; सच मानिए, मेरा दिल फड़कने लगता है। आपसे मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हूं कि आज दो-चार राग और सुनाइएगा। आज मेरे बच्चे का जन्म-दिन है। ज़रा ज़ोर से गाइएगा। पड़ोसी होने के नाते आप भी जी खोलकर हर्ष मनाइएगा। आप जैसे गवैये के रहते हुए मैं किसी

दूसरे के पास क्यों जाऊं, दादुर दादा !

मेंढ़क अपनी प्रशंसा सुनकर गद्‌गद हो गया । रात होने पर उसने बड़ा उत्साह से अपना बेसुरा राग छेड़ा । उसका टर्राना और भें-भें, भों-भों करना सुनकर चूहा बिल से बाहर निकला और किनारे से कंकड़ियां बीन-बीनकर तालाब में फेंकने लगा ।

मेंढ़क ने गाना बन्द करके पूछा--कौन मेरे रंग में भंग डालता है ?

चूहा बोला—मैं तुम्हारा पड़ौसी मूषकचन्द्र हूं । रात में हल्ला-गुल्ला बन्द करो । मुझे सोने दो । तुम तंग करोगे तो मैं जंग करूंगा ।

मेंढ़क बिगड़कर बोला--क्यों रे बिलवासी, तू सर-सरकार के सिर पर ढेला मारता है ! क्या तुझे यह पता नहीं है कि मैं तालाब का महाराज मंडूकजी हूं ।

चूहे ने उत्तर दिया--अरे जल-डफाली, क्या तू यह नहीं जानता कि मैं इस तट का सम्राट् हूं ! यह मेरे सोने का समय है, बड़बड़ाना बन्द कर !

मेंढ़क घुड़ककर बोला--क्या कहा ! तू यहां का स्वामी कब से बन बैठा ? तालाब के बाहर-भीतर का एकमात्र स्वामी मैं हूं । मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं कि अभी मेरे राज्य से निकल जाओ !

चूहे ने भी चिल्लाकर कहा—चुप, चुप रे घोंघा, किनारे आने का नाम लेगा तो तेरी टांग तोड़ डालूंगा।

बस फिर क्या था, मेंढ़क कूदकर तट पर आ बैठा और ताल ठोंकने लगा। उधर से चूहा भी पैंतरे बदलने लगा। बड़ी देर तक 'तू-तू, मैं-मैं' करने के बाद दोनों ने पेड़ पर बैठी हुई चील से कहा—आकाश की देवी, तुम निर्णय कर दो कि यहां का राजा कौन है ?

चील ने कहा—भाइयो, जब तक यह न मालूम हो कि कौन अधिक बलवान है, तब तक मैं कैसे इस बात का निर्णय करूं ! दुनिया तो बलवान को बड़ा मानती है। बल का पता युद्ध से चलता है। जो युद्ध में जीतता है, वह सबका स्वामी माना जाता है। यदि तुम लोगों में कुछ दम हो तो मैदान में उतर जाओ। जिसमें दम न हो, उसके लिए अच्छा है कि वह यहां से खिसक जाए। इस झगड़े का निपटारा आज हो ही जाना चाहिए, क्योंकि एक राज्य में दो राजा नहीं रह सकते।

दोनों मूर्ख जीव अपना-अपना बल दिखाने के लिए आंख मूंदकर भिड़ गए। उनमें घमासान युद्ध होने लगा। चील इसी मौके की ताक में थी। उसने एक झपट्टे में दोनों का शिकार कर लिया।

: ७ :

काम के बनो

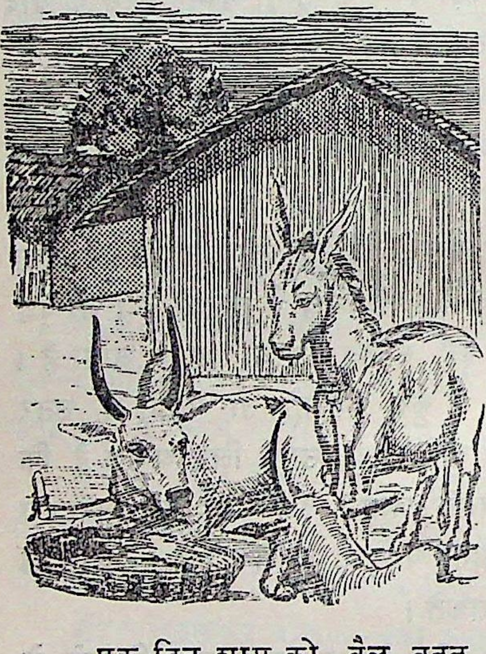

एक किसान के पास एक जोड़ी बैल ग्रौर एक गधा था। बैलों को वह दिन-भर हल में जोतकर खेती करता ग्रौर गधे पर कभी-कभी ग्रनाज ग्रादि लादकर बाज़ार में बेचने ले जाता।

एक दिन शाम को बैल बहुत थके-मांदे लौटे। गधे ने उनकी दशा देखकर कहा--भाइयो, दिन-भर हवा खाने के बाद भी तुम लोग उदास क्यों हो ?

एक बैल ने उत्तर दिया--मित्र, हम हवा नहीं, दिन-भर हलवाहे का डंडा खाते हैं। तुम हमारे कष्ट को नहीं समझ सकते।

गधा--अरे भाई, कुछ हमें भी बताओ। हम सात पीढ़ियों के पंडित हैं। तुम्हें अभी संकटमोचन का मंत्र पढ़ा देंगे।

बैल--सुनो, हम नित्य सवेरे से सन्ध्या तक हल में जोते जाते हैं। हल को खींचते-खींचते हमारे कंधों पर घट्ठे पड़ गए हैं। कभी काम में चूकते हैं तो हलवाहा पीछे से डंडा मारता है। उसके भय से हम स्वप्न में भी थरथराते हैं। तुम हमसे कहीं अधिक सुखी हो, क्योंकि दिन-भर आंखें मूंदे पड़े खाते हो, सप्ताह में एक-दो बार घंटे-दो-घंटे के लिए ही तुम्हें बोझ ढोना पड़ता है। तुम्हारी निगरानी भी नहीं होती, इसलिए तुम स्वतन्त्र रहते हो। हमें किसान शाम को दाना-भूसा अवश्य देता है, लेकिन प्रेमवश नहीं--उसका तो यह स्वार्थ रहता है कि हम दूसरे दिन उसके काम आएं। हम एक दिन भी तो आराम से नहीं बैठ पाते।

गधे ने गर्व से कहा--बस, बस, अधिक न बोल। मैं समझ गया, क्योंकि बुद्धिमान को एक इशारा

ही बहुत है। मैं समझ गया कि तू नम्बरी मूर्ख है। इसलिए तुझे इतना परिश्रम करना पड़ता है। तेरी मूर्खता यह है कि तू हमेशा स्वस्थ बना रहता है। तू बड़े आदमियों की तरह बात-बात में बीमार बनना नहीं जानता। भाई, तू आराम चाहता है तो कभी-कभी रईस की तरह बीमारी का ढोंग किया कर, सुस्त बनकर बैठ जा, भूसा खाना छोड़ दे। बस, तुझे छुट्टी मिल जाएगी। हमारे बाप-दादों ने हमें यह सिखाया है कि काहिल बने रहो, जिससे तुम्हें बेकार समझकर आदमी तुम्हारा पिण्ड छोड़ दे। मेरी राय में तू मिट्टी के ढेले की तरह जहां का तहां पड़ा रह। कोई तुझे उठाने न जाएगा।

बैल को गर्दभ-नीति बहुत पसन्द आई। दूसरे दिन सवेरे वह आंखें मूंदकर लेट गया। हलवाहा उसको खोलने आया तो वह उठा ही नहीं। उसने किसान को बुलाया। किसान ने आकर देखा तो बैल ने रात का भूसा भी नहीं खाया था। उसकी सांस ज़ोर से चल रही थी, शरीर ढीला पड़ गया था। किसान ने बैल को बीमार समझकर हलवाहे से कहा—यह बीमार है, इसे खली, महुआ और चोकर खाने को दे दो और इसके स्थान पर दूसरे बैल के साथ आज इस

बैठे-ठाले गधे को जोतकर किसी तरह काम चलाओ।

बैल को तो छुट्टी मिल गई, लेकिन उसके गुरु गधे को लेने के देने पड़ गए। हलवाहे ने उसको हल में जोत दिया। बेचारा हल में चलना तो जानता नहीं था, इसलिए कुछ दूर चलकर अड़ जाता था। पीछे से हलवाहा कसकर डंडे लगाता था। शाम तक वह बैल के साथ घसीटा गया और अधमरा होकर हांफता, लड़खड़ाता पशुशाला में लौटा। वहां उसका चेला बैल ऊंघता हुआ डकारें ले रहा था।

गधे को देखकर बैल ने उसका स्वागत करके कहा—मित्रजी, तुम्हारी कृपा से मेरा आज का दिन बड़े सुख से कटा, आज तो बराबर नींद के झोंके आ रहे हैं। कहो, तुम्हारा क्या हाल है ?

गधा धम से पृथ्वी पर गिर पड़ा और कराहता हुआ बोला—कुछ न पूछो, बेहाल हूं; नस-नस में पीड़ा है, एक-एक जोड़ टूट रहा है।

बैल उसकी दुर्दशा देखकर हंसने लगा। थोड़ी देर में गधे ने स्वस्थ होकर उससे पूछा—क्यों भाई, अब तो सुस्ता लिए ; बताओ, कल क्या करने का विचार है ?

बैल बोला—कल भी वही करूंगा, जो आज

किया है। गुरुजी, अब तो आपने मुझे मुक्ति का मार्ग दिखा दिया है, मैं उसीपर चलूंगा।

गधे के कान में यह बात तेज़ाब की तरह पड़ी। थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद वह मुंह बनाकर रोने लगा। बैल ने पूछा---खरजी, क्या एक ही दिन के परिश्रम से आप इतना घबरा गए कि कल की बात सोचकर अभी से रोने लगे ?

गधा बोला---नहीं भैया शिवदास, मैं अपने लिए नहीं, अपने एक प्यारे मित्र के लिए रो रहा हूं, जो कल मुझसे सदा के लिए बिछुड़ जाएगा।

बैल ने पूछा---वह कौन है वैशाखनन्दन जी, बताइए तो मैं भी उसके नाम पर दो-चार आंसू बहा लूं।

गधा—भाई, जानना ही चाहते हो तो सुनो। आज शाम को लौटते समय मैंने किसान को हलवाहे से यह कहते सुना कि कल किसी कसाई को बुलवाकर इस रोगी बैल को बेच दो जिससे इसके मांस और चमड़े से कुछ दाम तो मिल जाएं। सो, कल तुम्हें कसाई बड़ी निर्दयता से काट डालेगा। यही सोचकर मैं रो रहा हूं।

गधे की बात सुनकर बैल के होश उड़ गए। वह बीमारी का बहाना छोड़कर उठ खड़ा हुआ। दूसरे

दिन सवेरे जब हलवाहा वहां आया तो बैल स्वस्थ मिला। वह दोनों बैलों को खोलने लगा। इतने में किसान भी एक धोबी के साथ आया और गधे की ओर हाथ दिखाकर उससे बोला—देखो भाई, यही गधा है; इसको खरीदकर तुम काम चलाओ, मेरे तो यह किसी काम का है नहीं। धोबी दाम देकर गधे को खोलकर ले चला। रास्ते में दोनों बैल जाते हुए मिले। उनमें से गधे के पुराने चेले ने पूछा—कहिए गुरुवर, अब आप क्यों उदास हैं ?

गधा मुंह लटकाकर बोला—हाय, हाय, तुम नाहक स्वस्थ बन गए। तुम बीमार रहते तो मुझे जीते-जी मरघट न जाना पड़ता। अब तो यह धोबी मुंगरे मार-मारकर मुझसे रात-दिन काम लेगा। तुम्हें तो रात में दाना-भूसा मिलता है, मुझे सूखी घास भी न मिलेगी। हे भगवान ! मैं भले आदमी के काम का क्यों नहीं बना ! !

गधा इतना ही कह पाया था, इतने ही में धोबी ने पीछे से उसकी पीठ पर एक मुंगरा लगाया। उसने व्याख्यान बन्द करके चुपचाप धोबी के घर का रास्ता पकड़ा।

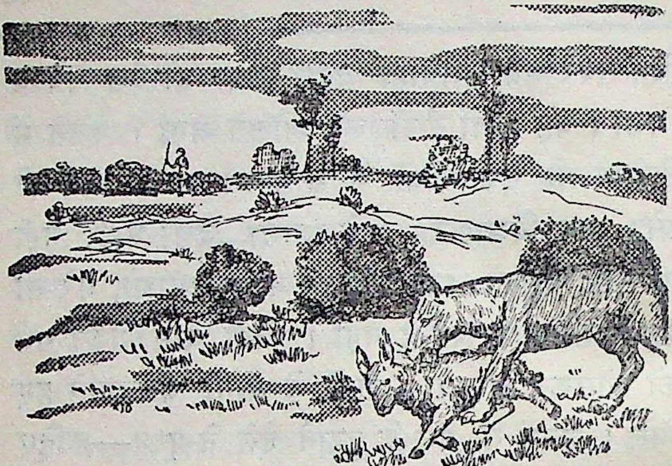

: ८ :

समझ की भूल

एक जंगल में बहुत-सी भेड़ें चर रही थीं। पास ही गड़रिया हाथ में लाठी लिए उनकी रखवाली कर रहा था। एक सीधा-सादा मेमना चरता-चरता झुंड से कुछ दूर चला गया। वहां झाड़ी में एक दुष्ट भेड़िया छिपा बैठा था। मेमने को देखते ही वह धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ा। मेमना डर के मारे चिल्लाता हुआ लौट पड़ा। भेड़िए ने सोचा कि कहीं इसका चिल्लाना सुनकर गड़रिया न आ धमके। इसलिए वह दुबककर वहीं बैठ गया और धीमे स्वर में मेमने को पुकारकर बोला—अरे कुंवर साहब, भागते क्यों हो!

आओ, आओ मेरे लाल, मैं तो तुम्हें एक हित की बात बताने आया हूं; क्षण-भर के लिए मेरे पास आओ, उसे सुन लो; ठहरो भैया, कहां जाते हो ?

मेमने ने कहा——नहीं, नहीं, मैं यहां नहीं रुकूंगा; मुझे तुमसे डर लगता है !

भेड़िया——क्या कहा राजा बेटा ! मुझसे डर लगता है ! जो तुम्हारा भला चाहता है, उसीसे तुम्हें डर लगता है ! यह तुम्हारी भूल है; आओ, निडर होकर मेरे पास आओ; मुझसे बढ़कर तुम्हारा शुभ-चिन्तक कौन है ?

मेमना——मैं अपनी मां के पास जा रहा हूं ।

भेड़िया——भाई वाह, मुझसे तो डर लगता है और अपनी मां से नहीं लगता ! छिः ! छिः ! ! तुम उससे प्रेम करते हो, जिसने तुम्हारा संसार में सबसे अधिक अहित किया है ! भला कोई अपने वैरी की शरण में जाता है ! तुम कितने भोले हो ! भोले न होते तो ऐसी मां को दूर से ही त्याग देते, जिसके कारण तुम्हारा सारा जीवन दुःखमय हो गया है ।

मेमना——आप क्या कहते हैं ? मेरी मां ने मेरे साथ अब तक उपकार ही उपकार किए हैं; उसीने मुझे जन्म दिया, वही मुझे प्रेम से दूध पिलाती है;

वही मेरी सब प्रकार से रक्षा करती है। वह मुझे हृदय से प्यार करती है।

भेड़िया––अरे भोंदू, वह तुझसे प्रेम करती होती तो तुझे अपने पेट से बाहर न निकालकर उसीमें रखती ! तुझे जन्म देकर उसने तुझे मौत के मुंह में डाल दिया है। तेरी मां जानती थी कि तुझे एक दिन कसाई काट डालेगा। तब उसने तुझे पेट ही में क्यों नहीं छिपा रखा ! बात यह है कि वह दुष्टा तुझे कसाई के हाथ सौंपकर स्वयं अपनी जान बचाना चाहती थी। उसके इस घृणित स्वार्थ को तू प्रेम कहता है ! वाह रे मूढ़, तू अपना हित-अहित नहीं पहचानता ! जिसने तुझे मरने के लिए ही पैदा किया है, उसके पास न जा। न जा, न जा मूढ़, मान जा ! मेरे पास आ; मैं तुझे अपने पेट में छिपाकर रखूंगा; वहां तेरी गर्दन पर कसाई की छुरी नहीं चल सकेगी।

मेमना भेड़िए की बातों में आ गया। और उसे अपना सच्चा स्नेही मानकर लौट पड़ा। भेड़िया उसे बहकाकर दूर जंगल में ले गया। वहां उसे पटककर वह अपने पैने दातों से उसका पेट फाड़ने के लिए बढ़ा। मेमने ने चिल्लाते हुए पूछा––आप यह क्या करने जा रहे हैं···ठहरिए···ठहरिए।

भेड़िए ने कहा--घबरा मत; मैंने जो कहा था, वही करने जा रहा हूं; तुझे अपने पेट में रखने जा रहा हूं; अब तू ऐसे स्थान पर पहुंच जाएगा, जहां कसाई का भय नहीं है।

यह कहते-कहते भेड़िए ने उस मतिहीन मेमने को दुर्गति कर डाली।

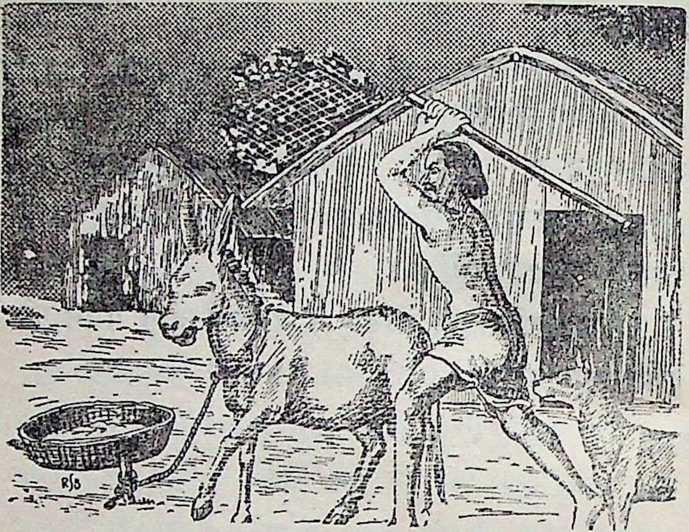

: ६ :

अनुचित चेष्टा

एक आदमी के घर में दो पशु थे---एक गधा और एक कुत्ता। गधे का काम था दिन में सामान ढोना और कुत्ते का काम था रात में घर की रखवाली करना। मालिक कुत्ते को गधे से अधिक मानता था, क्योंकि वह अकेला रात में चार पहरेदारों का काम करता था। यों भी लोग कुत्ते को गधे से अधिक ही चाहते हैं।

एक रात में सब सो रहे थे। कुत्ता गधे के खूंटे के पास बैठा था। गधे ने उससे कहा---कुत्ता

भाई, तुम नित्य रात-भर जागते हो, आज थोड़ा सो लो; मैं तुम्हारी जगह पहरा दे लूंगा। कहीं चोर की आहट मिलेगी तो मैं इतने ज़ोर से बोलूंगा कि आकाश-पाताल के सोने वाले भी जग जाएंगे।

कुत्ता बोला——नहीं, नहीं, वैशाखनन्दनजी, मेरा काम मुझे करने दो; तुम जिस काम के योग्य हो, उसीको करो; यह काम तुमसे नहीं हो सकता।

गधे ने सोचा कि कुत्ता सारी वाहवाही स्वयं लेना चाहता है इसीलिए दूसरों को ऐसा काम करने से रोकता है जिससे मालिक उसीपर प्रसन्न रहे। थोड़ी देर बाद फिर वह कुत्ते से बोला——अरे भाई, सो गए क्या! अभी कहीं कुछ खटपट हुआ है; जान पड़ता है, घर के आसपास चोर आए हैं।

कुत्ते ने कहा——तुम क्यों परेशान होते हो! खट-पट क्या कहीं चें-में भी होगा तो मुझे सुनाई पड़ जाएगा। तुम चैन से सोओ——यहां कोई चोर-डाकू नहीं है।

गधा चुप हो गया; लेकिन उस दिन उसने कुत्ते का गौरव स्वयं लेने का निश्चय कर लिया। आधी रात होने पर वह फिर बोला——अरे श्वानजी, तुम तो ऐसे अचेत पड़े हो कि जान पड़ता है घर में नहीं,

श्मशान में पड़े हो। अभी ऊंघते-ऊंघते मैं धड़ाके का शब्द सुनकर जग गया। मन में आता है कि चिल्ला-कर मालिक को सावधान कर दू।

कुत्ते ने कहा--गर्दभ, यह धड़ाका कहीं बाहर नहीं, तुम्हारी खोपड़ी में हुआ है। जान पड़ता है तुम कोई बुरा स्वप्न देख रहे थे। सो जाओ, मालिक को सावधान करना मेरा काम है। कुछ होगा तो मैं चुप-चाप बैठा नहीं रहूंगा।

गधा खीझकर बोला--मैं क्या अपने स्वामी का शुभचिन्तक नहीं हूं? तुम बार-बार मुझे बोलने से क्यों रोकते हो? तुम स्वयं तो आलस्य के मारे कुछ करते नहीं और मुझे भी उपदेश देते हो कि मालिक का घर लुटने दो। मैंने अभी-अभी धड़ाका सुना है; ऐसे अवसर पर मालिक को जगा देना मेरा कर्तव्य है।

कुत्ते ने कहा--गधे, तुझे क्या हो गया है! तू व्यर्थ के लिए मेरे काम में क्यों दखल देता है? मुझे स्वामी ने विश्वासपात्र समझकर ही इस कार्य के लिए नियुक्त किया है। मैं जब आवश्यकता देखूंगा तो उसे जगाने के साथ स्वयं चोरों का पीछा करूंगा। तू अब चैन से सो जा।

गधा घंटे-भर चुप रहा। इसके बाद उससे रहा

नहीं गया। वह मालिक को अपनी सजगता का परिचय देने के लिए अकारण रेंकने लगा। मालिक जग गया। उसे असमय में गधे का बोलना ऐसा बुरा लगा कि वह लट्ठ लेकर उसे पीटने लगा। मार खाकर जब गधा चुप हो गया तो आदमी फिर सोने चला गया।

उसके जाने के बाद कुत्ते ने इस मूढ़ जीव से कहा——भैया, तुम अपने किए का पूरा फल पा गए कि नहीं ! मैंने तो कहा था कि अनुचित चेष्टा न करो।

गधा कराहता हुआ बोला——क्या बताऊं, यह भाग्य का दोष है। तुम बोलते हो तो मालिक प्रसन्न होता है और मैं बोलता हूं तो डंडे मारता है।

कुत्ते ने कहा——भाग्य का दोष नहीं, तुम्हारा बुद्धि-दोष है। तुम्हें ऐसा दुस्साहस फिर नहीं करना चाहिए। गधा मार खाकर सोने लगा।

: १० :

बुद्धि का सदुपयोग

किसी वन में एक आवश्यकता से अधिक चतुर खरगोश रहता था। वहां कोई बड़ा जीव-जन्तु नहीं था, इसलिए उसीका बोलबाला था। वह अपने को उस जंगल का बाघ ही समझता था। एक दिन एक कबूतर से उसकी भेंट हुई। कबूतर एक पेड़ के नीचे चारा चुग रहा था। खरगोश अपनी मूंछें मरोड़ता हुआ उसके पास जाकर बोला--अरे कबूतरी के बच्चे, तू बड़ा ही निर्बल जीव है।

कबूतर नम्रता के साथ बोला——भाई साहब, मेरी निर्बलता का पता आपको कैसे लगा ?

खरगोश——तेरे दो ही पैर हैं, मुंह में एक भी दांत नहीं है, ताव देने के लिए मूंछें नहीं हैं, तेरी डिबिया-जैसी छोटी खोपड़ी में रत्ती-भर बुद्धि होगी।

कबूतर——और आपका क्या हाल है ?

खरगोश——मेरे चार पैर हैं, इससे मैं दुनिया के चारों कोने नाप सकता हूं, मेरे मुह में दांतों की बड़ी-बड़ी दीवालें हैं। मूंछें तुम्हारे सामने ही हैं। मेरी खोपड़ी में सौ बुद्धियां हैं जो एकसाथ सौ उपाय सोचती हैं——सौ दिशाओं में दौड़ती हैं।

कबूतर——आप बहुत बड़े जीव हैं। मैं तो तुच्छ प्राणी हूं। परमात्मा ने मुझे एक ही बुद्धि दी है, उसी-से अपना सब काम चलाता हूं। उस एक को ही वश में रखना कठिन है। भगवान जाने, आप सौ बुद्धियों से कैसे काम लेते होंगे।

ये बातें हो ही रही थीं, इतने में सामने से एक शिकारी आता दिखाई पड़ा। कबूतर ने उसको देखते ही खरगोश से कहा——शतबुद्धिजी, सामने यमदूत आ रहा है, भागिए। खरगोश चटपट पेड़ के खोखले में घुस गया। कबूतर ने उड़ना ठीक नहीं समझा; वह

भी भागकर उसी खोखले में चला गया ।

शिकारी ने दोनों को भागते देख लिया था। वह तुरन्त पेड़ के पास आ पहुंचा। उसके पैरों की आहट पाकर कबूतर ने धीरे से खरगोश के कान में कहा--दादा, शत्रु सिर पर पहुंच गया है, अब अपनी बुद्धियों को चारों ओर दौड़ाकर बचाव का कोई रास्ता ढूंढ़िए।

खरगोश ने कांपते हुए उत्तर दिया--बोल मत, कपोती-कपूत ! इस समय मेरी एक भी बुद्धि काम नहीं कर रही है, चारों पैर कांप रहे हैं, दांत हिल रहे हैं, मूछों के बाल झड़ना ही चाहते हैं ।

खरगोश की असमर्थता देखकर कबूतर आंखें बन्द करके चुपचाप लेट गया। शिकारी ने खोखले में हाथ डाला तो पहले कबूतर की टांग पकड़ में आई। उसने उसे बाहर निकालकर देखा तो उसकी गर्दन लटकी हुई थी, सांस बन्द थी और वह ऐंठा हुआ था। शिकारी ने समझा कि या तो इसका दम घुट गया है या भीतर ही इसे खरगोश ने मार डाला है। उसे फेंककर उसने खरगोश को पकड़ने के लिए खोखले में दुबारा हाथ डाला। इस बार खरगोश का कान उसके हाथ में आया। उसे पकड़कर शिकारी ने बाहर खींच

लिया। वह पानी में से निकाली हुई मछली की तरह छटपटाने लगा। उधर कबूतर चुपचाप ज़मीन पर से उड़कर एक पेड़ की डाली पर जा बैठा।

खरगोश ने उसे सुरक्षित स्थान पर बैठे देखकर पुकारा—पक्षिराजजी, कपोत-कुमारजी, आप कैसे बच गए ? मेरा भी उद्धार कीजिए।

कबूतर बोला—चौपायाजी, मैं तो अपनी एक बुद्धि की सहायता से बच गया। आपके पास तो बुद्धियों की बड़ी भारी सेना है, उससे सहायता मांगिए !

खरगोश—कबूतर-कुल-केसरी, मेरी बुद्धि-सेना तो मारी गई है, आप ही कुछ सुझाइए !

कबूतर—तब ऐसी निरर्थक वस्तुओं को आप क्यों अभिमान के साथ ढोते फिरते थे, जो समय पर काम नहीं दे सकतीं। आप तो पूरे गधे जान पड़ते हैं।

उन दोनों की बातचीत सुनकर शिकारी ने एक बार ज़मीन की ओर देखकर पेड़ पर दृष्टि डाली।

जिस कबूतर को वह मरा समझकर फेंक चुका था, वह पेड़ की डाली पर बैठकर गर्दन मटका रहा था। शिकारी को उसपर बड़ा क्रोध आया। उसने

खरगोश को वहीं पटककर कबूतर को मारने के लिए धनुष-बाण उठाया। इस बीच में कबूतर के इशारे से खरगोश भागकर एक झाड़ी में छिप गया और वह स्वयं फुर्ती से शिकारी की दृष्टि से ओझल हो गया।

: ११ :

अनर्थ की जड़

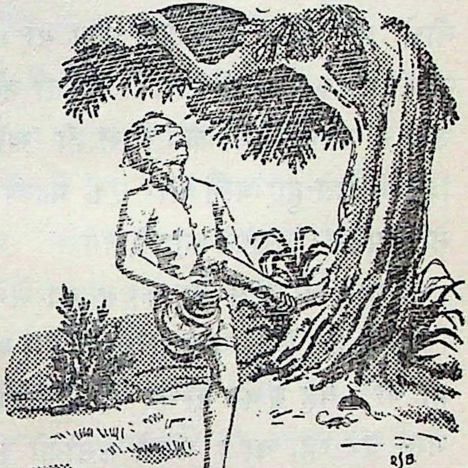

बहुत दिनों की बात है-- भोंदूसिंह नाम का एक आदमी अपने बाग में ढेले से आम झोर रहा था। उसने कई ढेले मारे, लेकिन एक भी आम नहीं गिरा। वह झुंझलाया हुआ खड़ा था, इतने में पेड़ की जड़ के पास से एक भयंकर बिच्छू निकला और उसके पैर के अंगूठे में डंक मारकर कहीं छिप गया। भोंदू तड़पकर पेड़ से बोला---रे बिच्छू के बाप ! तू नहीं जानता कि मैं किस बाप का बेटा हूं। सुन, मैं राजपूत हूं। तेरे

साथी ने मुझे डंक मारा है, मैं अभी तुझको निर्मूल करके छोड़ूंगा। शत्रु से बदला लेना मेरा धर्म है।

क्रोध और पीड़ा से पागल होकर वह घर से एक कुल्हाड़ी उठा लाया। उससे उसने दो घंटे के भीतर आम के पुराने पेड़ को काटकर गिरा दिया। पेड़ के नीचे एक मुर्गा चींटे चुग रहा था। संयोग से एक टहनी उसके ऊपर गिर पड़ी। मुर्गा क्रोध से तिलमिला उठा। उसने चींटों का बिल ही खोद डाला। चींटे बिलबिलाते हुए भागे और एक झाड़ी में सोए हुए सांप से लिपटकर उसको काटने लगे।

सांप चींटों से वैर का बदला लेने में असमर्थ था, फिर भी उसे कहीं न कहीं अपने मन का क्रोध उतारना ही था। वह बेचैन होकर वहां से भागा। सामने एक भैंसा चर रहा था। उसने उसीको काट लिया। भैंसे का काला शरीर क्रोध से लाल हो गया। सांप पर वह अपना बल दिखा नहीं सकता था, इसलिए चित्त की गर्मी शान्त करने के लिए उसने पास के एक केले के पेड़ को उखाड़ डाला। केले में एक चमगादड़ लटका था। पेड़ के साथ वह भी ज़मीन पर गिर पड़ा। उसका खून भी गर्म हो गया, लेकिन वह भैंसे से कैसे भिड़ता! वह उड़कर एक हाथी के कान में

घुस गया और उसको भीतर से खरोंचने लगा। हाथी कान फटफटाता हुआ बस्ती की ओर भागा। वहां उसने अपने मन का क्रोध-भार एक मोटे पेड़ पर उतारा। उसके धक्के से टूटकर पेड़ एक बुढ़िया के घर पर गिर पड़ा। उसका घर मिट्टी में मिल गया। उधर चमगादड़ हाथी के कान से निकल भागा।

बुढ़िया न्याय के लिए राजदरबार में पहुंची। राजा ने हाथी को पकड़वा मंगाया। हाथी ने अपने उत्पात के कारण बताते हुए राजा से कहा—श्रीमान्, हम क्या करें; उस चमगादड़ ने अकारण मेरे ऊपर हमला किया। हम उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते थे क्योंकि वह हमारे भीतर होते हुए भी हमारी पहुंच के बाहर था। इसलिए उत्तेजित होकर हमने उस पेड़ को तोड़ डाला। महाराज, अपराधी तो चमगादड़ है। उसीकी दुष्टता से यह अनर्थ हुआ है।

दरबार में चमगादड़ भी बुलवाया गया। उसने अपने को निर्दोष बताते हुए कहा—दयानिधान, दोषी तो भैंसा है। उसकी दुष्टता से मेरा क्रोध प्रबल हुआ। उस क्रोध को मैंने इस हाथी पर उतारा, तब जाकर चित्त हल्का हुआ।

एक-एक करके इसी प्रकार सब उपद्रवी बुलाए

गए। सबने राजा के सामने इसी ढंग का बयान दिया। भैंसे ने सांप को, सांप ने चींटों को, चींटों ने मुर्गे को, मुर्गे ने पेड़ को, पेड़ ने भोंदूसिंह ठाकुर को और भोंदू ने बिच्छू को दोषी बताया। अन्त में बिच्छू आकर बोला---महाराज, मैंने जान-बूझकर कोई अपराध नहीं किया है; डंक मारना तो मेरा स्वभाव है। यदि भोंदू समझ से काम लेता तो बात इतनी न बढ़ती।

राजा समझ गया कि इनमें से प्रत्येक ने अपने से बलवान के सामने अपने को असमर्थ पाकर, जिसको अपने से निर्बल पाया उसीपर अपने मन का क्रोध उतारा है। 'ठोकर लगी पहाड़ को, फोड़े घर की सील' जैसा हाल हुआ था। वह भोंदूसिंह से बोला---मूर्ख, अकेले तेरे बुद्धि-दोष से इतना बड़ा वितंडा हुआ है।

भोंदू बोला---राजाजी, मैं क्या करता? वह बिच्छुवा तो काटकर छू-मन्तर हो गया; मैं पेड़ को न काटता तो किसको काटता?

राजा---जिसने तेरा अहित किया था, यदि तू उसे नहीं मार सकता था तो तुझे अपने मन को मारना चाहिए था। इस बेचारे पेड़ पर तूने अत्याचार क्यों किया? हम तुझे दंड देंगे।

भोंदूसिंह दंड के नाम से कांपता हुआ कान पकड़-कर बोला—राजाजी, हमने अज्ञान के कारण ऐसा किया है।

राजा—हम तुझे तेरे अज्ञान का ही दंड देंगे। मूर्खता मनुष्य का महादोष है। उसके कारण समाज में बड़े-बड़े अपराध होते हैं। तू अज्ञानी क्यों बना हुआ है ?

भोंदू—राजा-महाराजा, मेरे बाप से बुलाकर इसका कारण पूछ लीजिए, तब जो चाहे कीजिए।

राजा ने भोंदू की प्रार्थना मानकर उसके बाप झिंगुरसिंह को बुलाकर उससे पूछा—क्यों ठाकुर, बेटा किसके पुण्य से बढ़ता है ?

झिंगुरी ने तुरन्त उत्तर दिया—महाराज, 'बाढ़ै पूत पिता के धरमा।'

राजा, और किसके पाप से उसका पतन होता है ?

झिंगुरी—राजन्, मनुष्य का पतन तो अपने ही दुष्कर्मों से होता है; अपने ही पेट की गड़बड़ी से तो सिर में दर्द होता है।

राजा—आपके कहने का अभिप्राय यह है कि पुत्र यदि भला काम करे तो उसके बाप को बड़ाई

मिलनी चाहिए और यदि वह बुरा काम करे तो सारी बुराई उसीके सिर मढ़ी जाएगी ; यह कहां की नीति है ? यह क्यों नहीं कहते कि पिता के पुण्य से पुत्र का जीवन बनता है और उसके पाप से बिगड़ जाता है। तुम्हारी ही असावधानी से तो तुम्हारा पुत्र अयोग्य, अज्ञानी मूर्ख बना हुआ है ! सारा दोष तुम्हारा है। तुमने उसे पढ़ाया-लिखाया होता तो वह ठीक रास्ते पर चलता। सोचो तो एक आदमी के अज्ञान से कितना बड़ा अनर्थ होता है। इसमें सुमति होती तो गांव में इस उपद्रव की जड़ ही न जमती।

झिंगुरी समझ गया कि अज्ञान ही अनर्थ की जड़ है। उसने राजा के सामने प्रतिज्ञा की कि मैं बुढ़िया का घर बनवा दूंगा और भोंदूसिंह तथा अन्य लड़कों को अब से शिक्षा दिलवाऊंगा।

: १२ :

शठ का हठ

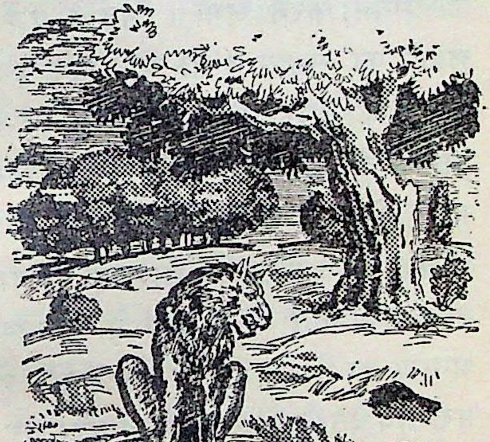

किसी वन में एक बलवान सिंह रहता था। वह स्वभाव से ही दुष्ट और अत्याचारी था; छोटे-मोटे जीवों को अकारण कष्ट देने में उसे बड़ा सुख मिलता था। सारे जंगल में चौबीसों घंटे उसका आतंक छाया रहता था। प्रबल अन्यायी के आगे कौन सिर उठाता। वह राजा नहीं, दीन-हीन प्राणियों का काल था।

एक दिन एक हिरनी अपने बच्चे को बड़े प्रेम से दूध पिला रही थी। दुर्भाग्य से सिंह घूमता-घामता

वहीं आ पहुंचा। हिरनी का सुख उससे देखा नहीं गया। उसने उसे केवल कष्ट पहुंचाने के लिए उसके छौने को छीन लिया। हिरनी व्याकुल होकर हाहाकार करती हुई वहां से भागी और एक-एक जीव के पास जाकर अपने अबोध बच्चे को मौत के मुंह से बचाने की प्रार्थना करने लगी। सिंह के पंजे से मृगछौने को छुड़ाने का साहस न तो चीते को हुआ, न रीछ को, न गैंडे को और न हाथी को। बड़े-बड़ों के द्वार से निराश होकर वह अपने छोटे भाइयों की शरण में गई। सिंह के भय से किसीने उसको अपने यहां अधिक देर तक ठहरने भी नहीं दिया, सहायता देना तो दूर की बात थी। अन्त में, एक खरगोश सिंह के अन्याय का विरोध करने को तैयार हुआ। वह मूंछों पर ताव देता हुआ आगे बढ़ा और दूर से ही सिंह को सुनाकर बोला—मैं इस निर्दयी सिंह को धूल में मिलाकर छोड़ूंगा; यह शठ है, दीन-द्रोही है, अभिमानी और क्रूर है; ऐसे नीच दुराचारी को जब तक मैं नष्ट न कर दूं, तब तक चैन नहीं लूंगा।

इस घोषणा को सुनते ही सिंह क्रोध से पागल हो गया। वह मृगछौने को वहीं छोड़कर खरगोश की ओर वेग से झपटा। उधर हिरनी अपने बच्चे को

उठाकर चलती बनी। इधर खरगोश सिंह को उत्तेजित करके भागकर अपनी मांद में घुस गया। सिंह उस मांद में कैसे घुसता, इसलिए वह उसके द्वार पर यह प्रण करके बैठ गया कि तुच्छ खरगोश की चटनी बनाकर ही यहां से टलूंगा। वह सोचता था कि कभी न कभी तो भूल से या भूख-प्यास की व्याकुलता से खरगोश बाहर आएगा ही।

खरगोश ऐसा मूर्ख नहीं था। उसने पहले ही अपने घर के पीछे एक गुप्त द्वार बना रखा था। सिंह तो सामने भूखा-प्यासा बैठा रहा और उसका शत्रु पिछवाड़े से निकलकर हिरनी के यहां दावत खाने लगा। रात में वह फिर उसी रास्ते से आकर अपने घर में सुख से सो जाता था।

कई दिन बीत गए; सिंह वहां से नहीं टला। बिना खाए-पिए वह दुर्बल हो गया फिर भी मन का अहंकार नहीं त्याग सका। एक दिन उसने रात में बाहर से पुकारा—अरे दंभी, बाहर क्यों नहीं निकलता; यह मत सोच कि मैं तुझे मारे बिना यहां से हट जाऊंगा। देखता हूं, तू कब तक बिना खाए-पिए वहां पड़ा रहता है! अब भी बाहर आकर मुझसे अपने अपराध की क्षमा मांग ले तो मैं तुझे अपनी

दीन प्रजा मानकर क्षमा कर दूंगा।

भीतर से खरगोश डपटकर बोला--कौन मेरी नींद में बाधा डालता है ? अभी यहां से भाग जा, नहीं तो मैं आकर तेरी मूंछ उखाड़ लूंगा !

इस घुड़की से सिंह का पारा और भी चढ़ गया। वह भूख-प्यास भूलकर खरगोश को दंड देने के लिए वहीं अड़ गया। खरगोश की तो कोई हानि हुई नहीं, क्योंकि वह प्रतिदिन सवेरे अपने गुप्त द्वार से जंगल में जाकर खा-पी आता था, परन्तु सिंह के शरीर का मांस धीरे-धीरे गल गया। उसी तरह बैठे-बैठे एक दिन वह हठी भूख-प्यास से ऐंठकर मर गया। उसके लिए सारे जंगल में कोई रोने वाला नहीं मिला। सब उस शठ के हठ का परिणाम देखकर हंसने लगे।

: १३ :

उलटी समझ

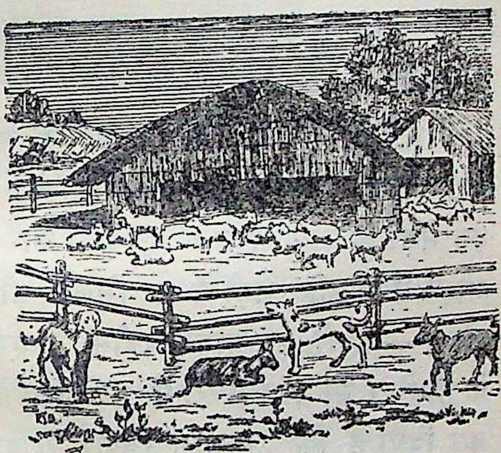

एक जंगल के पास एक छोटा - सा गांव था। उसमें एक गड़रिया रहता था। उसके पास पचासों भेड़ें थीं। गड़रिए ने उनकी रखवाली के लिए कुछ कुत्ते पाल रखे थे। दिन में भेड़ें जब जंगल में चरने जातीं तो कुत्ते भी उनकी रक्षा के लिए साथ जाते थे। रात में जब वे अपने बाड़े में सोने लगतीं तो कुत्ते चारों ओर से पहरा देते थे। इस प्रकार कुत्ते भेड़ों के सच्चे मित्र, सिपाही और प्राण-रक्षक थे।

गांव के पास वाले जंगल में कुछ भेड़िए भी रहते

थे। वे भेड़ों को चरते देखकर उन्हें खाने के लिए ललचाते थे, लेकिन कुत्तों के भय से पास नहीं आते थे। रात में भी वे खुले बाड़े के इधर-उधर दांव-पेंच लगाते थे, लेकिन कुत्तों का पहरा इतना कड़ा था कि कोई भेड़ों की ओर आंख उठाकर भी नहीं देख सकता था। कहीं कुछ खटकता तो वे भौंकते हुए दौड़ पड़ते थे।

भेड़ियों का जब कोई वश न चला तो उन्होंने नीति से काम लिया। उन्होंने गुप्त वेश में अपना एक दूत भेड़ों के पास भेजा। वह भेड़ों की खाल ओढ़कर जंगल में चरती भेड़ों से जा मिला और बड़े प्रेम से बोला—बहनों, हम आपके पड़ौसी हैं, एक ही बिरादरी के हैं, फिर भी बीच वालों ने कुछ ऐसा भेद-भाव पैदा कर दिया है कि हम पास रहकर भी दूर मालूम पड़ते हैं, आपस में मिल-जुल नहीं सकते, साथ-साथ खा-पी नहीं सकते, खेल-कूद नहीं सकते। यह कितने दुःख और लज्जा की बात है।

एक बुढ़िया भेड़ बोली—तुम कौन हो, क्या चाहते हो ?

दूत—हम भेड़ियों के दूत हैं; आपके साथ मित्रता का प्रस्ताव लेकर आए हैं। हमारी इच्छा है कि हम

लोग मिल-जुलकर रहें, जंगल में मंगल करें, फूट डालने वालों से बचकर रहें, सुख से खाएं-पिएं और सोएं।

भेड़ दादी—यह तो बहुत अच्छी बात है। हम तो स्वभाव से ही क्रान्तिकारी नहीं हैं। देखते नहीं, हम लोग मुर्दों की तरह शान्त रहते हैं।

दूत—मामी, यह सब ठीक है। हम लोग भी जन्म-जन्मान्तर से शान्ति के पुजारी हैं। लेकिन ये कुत्ते हमारे और आपके बीच वैर के बीज बोते रहते हैं। ये जान-बूझकर हमें आपसे मिलने नहीं देते।

भेड़ दादी—ये बेचारे तो हमारे शुभचिन्तक और रक्षक हैं।

दूत—शिव, शिव, क्या कहा आपने? अरे, ये रक्षक हैं कि भक्षक! ये तो आपके मालिक का धन मुफ्त में लूटकर खाते हैं। यदि ये पेटू जीव न होते तो आपका मालिक जो खाना इन खाऊबीरों को देता है, वही आपको देता। ये तो धोखे की टट्टी खड़ी करके आपका हिस्सा दिन-दहाड़े लूट रहे हैं। यही तो हमसे देखा नहीं जाता। हममें-आपमें मेल होता तो घर की पूंजी क्यों नष्ट होती? आप लोग इस झगड़े की जड़ को काटिए और स्वतन्त्र होकर हम लोगों के यहां

दावत खाने आया कीजिए। इन कुत्तों से पीछा छुड़ा लीजिए तो आपका बड़ा कल्याण होगा।

यह कहकर दूत कुत्तों के भय से चला गया। भेड़ों पर उसकी बातों का बड़ा प्रभाव पड़ा। उस दिन से वे कुत्तों से चिढ़ने लगीं। जो कान मीठी-मीठी बातों का रस ले चुके थे, वे कुत्तों का भौंकना नहीं सह सकते थे। रात में जब कुत्ते भौंकते तो भेड़ें गिन-गिनकर उन्हें गालियां सुनातीं। उन्हें वे अपना वैरी समझकर घृणा की दृष्टि से देखने लगीं। धीरे-धीरे उन्होंने लड़-झगड़कर कुत्तों को वहां से भगा दिया। जब वे चले गए तो जंगल से भेड़ियों का दूत फिर उनसे मिलने आया। उनसे सच्चा हाल मालूम करके कहा——आज बड़े सुख का दिन है। बहनो, आज हम लोग रात में आपके घर आएंगे और परस्पर गले मिलेंगे। भेड़ों ने कहा——अवश्य आइएगा, हम प्रतीक्षा करेंगे।

रात में झुंड के झुंड भेड़िए सचमुच आ पहुंचे। आते ही उन्होंने एक-एक भेड़ को गले से लगाकर फाड़ खाया। भेड़ों को अपनी उलटी समझ का दंड मिल गया। शत्रु को मित्र और मित्र को शत्रु समझने वालों का यही हाल होता है।

: १४ :

विग्रह का ग्रह

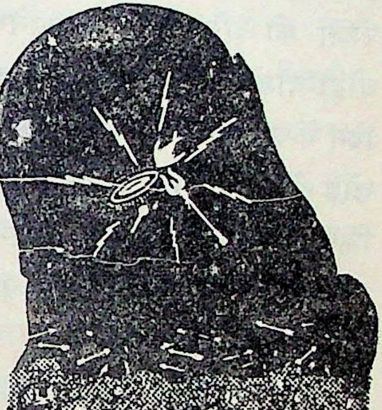

एक बार किसी ग्रह ने अपने कार्य में असावधानी की। इसपर सूर्यदेव ने रुष्ट होकर उसे यह शाप दे डाला—दुष्ट, तेरा चाल-चलन ठीक नहीं है ; तू स्वर्ग के निकट रहने का अधिकारी नहीं है ; इसलिए मैं तुझे शाप देकर घोड़ी बना देता हूं। अब तुझे पृथ्वी पर जाकर घास खाकर जीवन बिताना होगा।

सूर्य जैसे प्रतापी का शाप मिथ्या कैसे होता ! उसके प्रभाव से ग्रह का रूप तुरंत घोड़ी जैसा हो गया। उसने वहां से चलने से पहले सूर्यदेव से हाथ जोड़कर

पूछा--देव, मेरा उद्धार कब और कैसे होगा ?

सूर्य ने कहा--जब साढ़े तीन वज्र इकट्ठे होंगे तभी तुझे इस शाप से छुटकारा मिलेगा।

वह घोड़ी देखते-देखते पृथ्वी पर आ गई और एक जंगल में चरने लगी। एक दिन उसपर एक शिकारी राजा की दृष्टि पड़ी। उसने उसे पकड़वाकर अन्य घोड़ी-घोड़ों के साथ अपने अस्तबल में बंधवा लिया। दिन में वह अन्य पशुओं के साथ वन में चरने के लिए छोड़ दी जाती थी। सायंकाल होने पर साईस लोग उसे फिर पकड़कर बांध देते। इस प्रकार वह वहां वर्षों रही।

एक दिन घोड़ी चरते-चरते एक पड़ौसी राजा राज्य में चली गई। वह राजा घोड़ी वाले राजा का पुराना वैरी था। नारद को प्रपंच करने का अच्छा अवसर मिल गया। वे अपना कामधाम छोड़कर तुरन्त दूसरे राजा के पास पहुंचे और बोले--पृथ्वीपति, तुम कुछ देख-सुन रहे हो ? उस राजा की घोड़ी आज तुम्हारे देश की घास चर रही है, कल सिर के केश चरेगी। तीनों लोकों में इस समय तुम्हारी हंसी हो रही है। यदि तुम अपनी नाक रखना चाहते हो तो घोड़ी को तुरन्त बंधवा लो और शत्रु को अंगूठा दिखा दो।

राजा ने भड़ककर उसी समय अपने सैनिकों द्वारा घोड़ी पकड़वा ली। अब नारद घोड़ी के स्वामी के पास पहुंचे और उसके प्रति बड़ा स्नेह प्रकट करके बोले—महाराज, अभी-अभी देवलोक में चर्चा हो रही थी कि पड़ौसी के अहंकारी राजा ने जान-बूझकर आपका अपमान करने के लिए आपकी घोड़ी पकड़वा ली है। देव-समाज में सब आपको कायर, शक्तिहीन मानने लगे हैं। उस घोड़ी के साथ आपकी प्रतिष्ठा भी चली गई है। यदि आप दूसरों के आगे मुंह दिखाना चाहते हैं तो चुपचाप न बैठिए। यदि वह अभिमानी सीधे घोड़ी वापस न करे तो उससे युद्ध कीजिए। आप किसी बात में उससे कम नहीं हैं। आप इस अपमान को सह लेंगे तो आपके शत्रुओं का मन बढ़ जाएगा। शीघ्र चेतिए...उठिए...क्षत्रिय-धर्म का पालन कीजिए...उस घोड़ी-चोर को कठोर दंड दीजिए...तेजस्वियों के क्रोध से ही अत्याचारियों को उचित कर्म का बोध होता है...अनीति का विरोध कीजिए!

नारद की उत्तेजनापूर्ण बातों से प्रभावित होकर उस राजा ने दूसरे राजा को तुरन्त घोड़ी वापस करने का सन्देश भेजा। उसको नारद पहले ही ठोक-पीटकर

ठीक कर आए थे। उसने घोड़ी देना अस्वीकार कर दिया। बस, फिर क्या था ! घोड़ी वाला राजा उस-पर चढ़ाई करने की तैयारी करने लगा। वह शिवजी का परम भक्त था। युद्ध में सहायता के लिए उसने अपने आराध्य देव का ध्यान किया। भगवान शंकर हाथ में त्रिशूल लेकर डमरू बजाते हुए उसकी सेना के आगे चले।

आक्रमण का समाचार पाकर दूसरा राजा भी युद्ध के लिए तैयार हो गया। वह विष्णु का पुजारी था। उसकी पुकार सुनकर भगवान विष्णु स्वयं हाथ में चक्र लिए और शंख बजाते हुए राजसेना के नायक बनकर युद्धक्षेत्र में पधारे।

दोनों दलों में भयंकर संग्राम छिड़ गया। एक ओर से विष्णु ने चक्र चलाया, दूसरी ओर से रुद्र ने क्रुद्ध होकर अपना त्रिशूल फेंका। दोनों टकराकर ऊपर की ओर उठे। उन्हें अपनी ओर आते देखकर इन्द्र ने स्वर्गलोक की रक्षा के लिए उनके ऊपर अपने वज्र से प्रहार किया। तीनों भयंकर अस्त्र टकराकर पृथ्वी की ओर लौटे। पृथ्वी पर भीमसेन अपने अखाड़े में गदा भांज रहा था। तीन वज्रों को एकसाथ आते देखकर वह उनके ऊपर अपनी गदा फेंककर प्राण

बचाने के लिए वहां से भाग खड़ा हुआ।

आकाश में साढ़े तीन वज्र टकराते हुए चक्कर काटने लगे। इधर घोड़ी तो ग्रह बनकर पुनः आकाश में जा पहुंची और शिव, विष्णु परस्पर ताल ठोककर मल्लयुद्ध करने लगे।

उन्हें लड़ते देखकर बुद्धिमान ब्रह्मा ने ऊपर से पुकारा——महापुरुषो, आप लोग जिस छोटी-सी वस्तु के लिए लड़-झगड़ रहे हैं, वह बीच से निकल गई है। अब अकारण विवाद करके अपनी शक्ति का अपव्यय न कीजिए।

उन्होंने ध्यान से देखा तो विग्रह का ग्रह वहां नहीं था। सब शान्त हो गए।

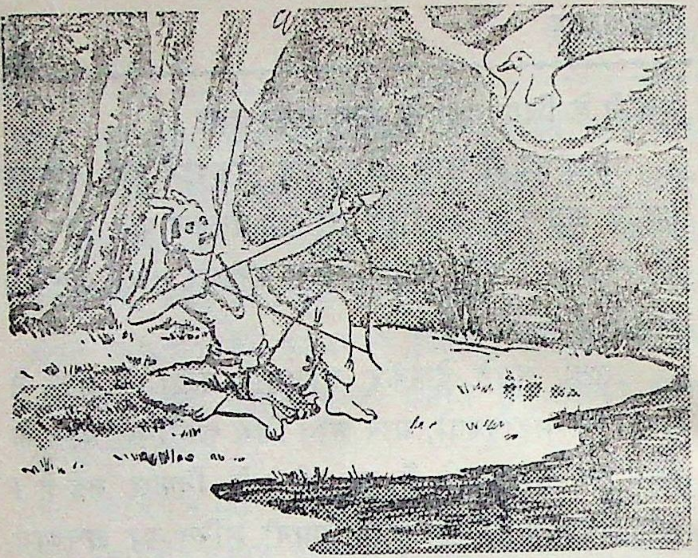

: १५ :

कुसंगति का परिणाम

एक घने वन में एक सुन्दर ताल था। उसमें एक राजहंस रहता था। ताल के तट पर एक विशाल वृक्ष था। उसपर एक दुष्ट कौआ निवास करता था। दोनों के स्वभाव भिन्न-भिन्न थे, फिर भी पास-पास रहने के कारण उनमें मित्रता हो गई। हंस के हृदय में तो कौए के लिए कोई दुर्भाव था ही नहीं, इसलिए उसकी ओर से मित्रता सच्ची थी। कौए की प्रीति दिखावटी थी। वह हंस का रूप-रंग, ठाट-बाट देखकर भीतर से तो जलता था, लेकिन बाहर से बुझा हुआ-सा लगता था।

एक दिन दोपहर के समय दोनों पेड़ की ऊंची डाली पर बैठे आपस में बातें कर रहे थे। इतने में एक थका-मांदा शिकारी कहीं से आया और सुस्ताने के लिए पेड़ की घनी छाया में लेट गया। लेटने के थोड़ी देर बाद उसे नींद आ गई। ऊपर से हंस ने देखा कि उसके मुंह पर ढलते हुए सूर्य की धूप पड़ रही है। उसने दयावश नीचे की डाली पर आकर अपने पंखों को छाते की भांति फैला दिया। जब तक शिकारी की नींद पूरी नहीं हुई, हंस उसी प्रकार पंख ताने बैठा रहा। परोपकार के लिए कष्ट उठाने में उसे तो सुख मिल रहा था, परन्तु कौआ द्वेष से जल-भुनकर और भी काला होता जाता था। मन ही मन वह हंस को उल्लू बनाकर फंसाने की चाल सोच रहा था।

कुछ देर में शिकारी जागकर लेटे-लेटे अपनी आंखें मलने लगा। उसी समय कौआ जान-बूझकर ऊपर से उसके सिर पर बीठ करके एक ओर को खिसक गया। शिकारी क्रोध से तिलमिलाकर उठ बैठा। ऊपर हंस अपने पंख खोले बैठा था। शिकारी ने उसे देखा और उसीको दोषी मानकर तत्काल एक तीर से मार गिराया।

कुसंगति के कारण उस साधु पक्षी को अपने प्राण गंवाने पड़े।

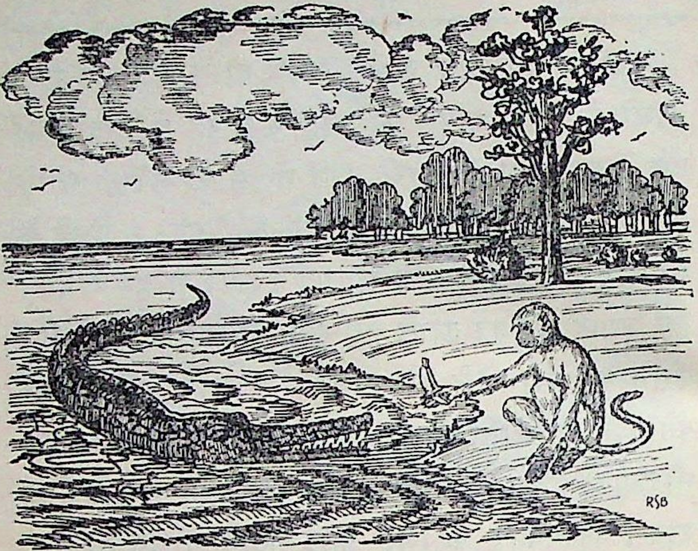

: १६ :

विश्वासघात का फल

दक्षिण समुद्र के निकट मीठे फलों का एक छोटा-सा वन था। उसमें वनवीर नाम का एक चतुर ानर रहता था। एक दिन वह घूमता-घामता समुद्र के किनारे पहुंचा। वहां उसकी भेंट जल के राजा मगर से हुई। दोनों बड़ी देर तक बातें करते रहे और उसके बाद अगले दिन फिर वहीं मिलने का पक्का वादा करके विदा हो गए। दूसरे दिन वनवीर ज़ घमने निकला तो मगर के लिए कुछ पके केले भो

लेता गया। मगर को वे केले बड़े ही मीठे लगे। वह वानर को बारम्बार धन्यवाद देता हुआ बोला--मित्र, मुझे तो तुम्हारा सत्संग बड़ा मीठा लगता है; नित्य आया करो; तुम्हारे जैसे मित्र को पाकर मेरा जीवन सफल हो गया।

वनवीर उसके आग्रह से वहां नित्य आने लगा। आते समय वह मित्रता की मिठास बढ़ाने के लिए कुछ केले अवश्य लाता। एक दिन मगर एक केला अपनी मगरानी के लिए भी ले गया। मगरानी को वह ऐसा प्रिय लगा, जैसे लोभी को पैसा। वह उसका छिलका तक खा गई। इसके बाद उसने पतिदेव से पूछा—कहिए आनन्दकन्द, आप यह सुधाकन्द कहां से लाए?

मगर बोला--महारानी, समुद्र-तट पर मेरा एक वानर मित्र है; वह प्रतिदिन मुझे कुछ फल दे जाता है। यह उसकी वाटिका का प्रसाद है।

मगरानी--अरे महाराज, तब तो वह नित्य इसीको खाता होगा और इसको खाने से उसका हृदय न जाने कितना मीठा हो गया होगा।

मगर बोला—इसमें क्या सन्देह; जो जैसा खाता है, वैसा ही बन जाता है। उसके हृदय की सरसता उसके वचन-व्यवहार से ही टपकती है।

रात में सहसा मगरानी के हृदय में पीड़ा होने लगी। दूसरे दिन सवेरे तक वह असह्य हो गई तो समुद्र के नामी वैद्य कच्छपजी बुलाए गए। कच्छपजी ने महारानी के कष्ट को सुन-समझकर कहा——इस रोग में तो वानर का हृदय खाना चाहिए, नहीं तो प्राण जाने का भय है।

मगरानी तो यह चाहती ही थी। उसने मगर से कहा——सुना आपने नाथ, वैद्यराज कहते हैं कि यह महारोग वानर का हृदय खाने से निर्मूल होगा। अब आप यदि मेरे प्राण बचाना चाहते हैं तो उस वानर को आज ही यहां लाइए, नहीं तो सन्ध्या तक में इस पीड़ा से तड़पकर मर जाऊंगी।

मगर बड़े धर्म-संकट में पड़ गया। अन्त में उसने मित्र की अपेक्षा स्त्री की जीवन-रक्षा को अधिक आवश्यक समझा। नित्य की भांति वह उस दिन भी समुद्र-तट पर जाकर बैठ गया। उधर से वनवीर भी आ पहुंचा। कुछ देर तक उससे बातें करने के बाद मगर ने कहा——प्यारे मित्र, समुद्र के उस पार क्यों नहीं चलते ? वहां आम, अनार, अनन्नास, अंगूर, अमरूद, अखरोट, आड़ू आदि के अनेक अच्छे वन हैं। हनुमान की तरह चलो और एक-एक वन को अशोक-वाटिका

की तरह उजाड़ो; खाओ-मोटाओ, यही तो जीवन का सुख है।

वनवीर बोला--मित्रवर, मुझमें इतना बल कहां कि हनुमान दादा की भांति कूदकर उस पार पहुंच जाऊं; मैं तो तैरना भी नहीं जानता।

मगर--मेरे रहते हुए तुम इसकी चिन्ता क्यों करते हो ? मेरी पीठ पर बैठकर तुम सागर क्या, भव-सागर तक को पार कर सकते हो। आओ भैया, चलो; फिर लौट आना।

वानर उसकी पीठ पर चढ़ गया। मगर तैरता हुआ अपने घर की ओर चला। घर के पास पहुंचकर डुबकी लगाने से पहले उसने सोचा कि अब तो शिकार फंस ही चुका है, इससे सच्ची बात बता देने में कोई हानि नहीं है। यह सोचकर वह बोला--वनवीर, अपनी मातृभूमि को अन्तिम बार देख लो; अब तुम इस जीवन में वहां नहीं लौट सकोगे।

वानर ने चौंककर पूछा--क्यों मित्र, अभी तो तुम मुझे फिर लौटाने का वादा कर चुके हो !

मगर ने उसे सारा रहस्य बता दिया। उसे सुनकर वनवीर सावधान होकर बोला--अरे मित्र, तुमने तो बड़ी भूल की। मुझसे यह भेद वहीं बता

देते तो मैं अपना हृदय साथ लेता आता। उसे तो मैं अपने बच्चों के पास छोड़ आया हूं; वे बड़े डरपोक हैं, इसलिए मैं अपने पास अपना हृदय छोड़कर तब बाहर निकलता हूं। चलो, चलो, उसे लेकर तब श्रीमतीजी के पास चलें।

मगर ने इसे बहाना समझा और फिर बात बनाकर कहा—घबराओ मत, यह तो मैंने योंही कह दिया। वास्तव में, आज हमारे यहां तुम्हारा प्रीति-भोज है।

वनवीर—भाई, तब तो हृदयहीन बनकर चलना उचित नहीं है; मुझे सहृदय होना चाहिए; चलो, मैं सामनेवाले पेड़ से अपना हृदय और कुछ मीठे फल लेकर तुरन्त वापस आ जाऊंगा। महारानी मगरानी से खाली हाथ मिलना ठीक न होगा।

मगर इस सन्देह में पड़ गया कि कहीं वह सचमुच अपना हृदय निकालकर रख न आया हो। उसके बिना मगरानी के मरने का भय था। इसलिए वनवीर की बात मानकर वह लौट पड़ा। फलों का लोभ भी उसे लौटाने में सहायक हुआ।

तट के पास पहुंचते ही वनवीर उछलकर ज़मीन पर जा रहा और वहीं से बोला—चिन्ता न कीजिएगा

मगरजी, मैं शीघ्र ही आऊंगा।

यह कहकर वह वन में चला गया। वहां उसने एक अंजीर का फल तोड़कर उसमें किसी विषैली बूटी का रस मिलाया। फिर उसे दूर से ही मगर के सामने फेंककर बोला--लीजिए, लीजिए महोदय, यही मेरा हृदय है, इसको लेकर आप तो तुरन्त जाइए, क्योंकि भव-संकट से मगरानीजी का शीघ्र उद्धार करना है--मैं आज नहीं चल सकूंगा, क्योंकि मेरा एक बच्चा अभी-अभी पेड़ से गिर पड़ा है--आप दोनों के दर्शन शीघ्र करूंगा।

मगर 'वानर का हृदय' लेकर अपने घर की ओर चल पड़ा। वहां उसने मगरानी को सारा हाल सुनाकर 'हृदय' का आधा टुकड़ा खाने को दिया। शेष भाग को लोभवश उसने स्वयं खा लिया। अंजीर में मिले हुए विष ने शीघ्र अपना प्रभाव दिखाया। दोनों छटपटाकर मर गए। तट पर बैठे हुए बुद्धिमान वानर ने थोड़ी ही देर बाद उन कृतघ्न जीवों के मृत शरीरों को पानी में तैरते देखा।

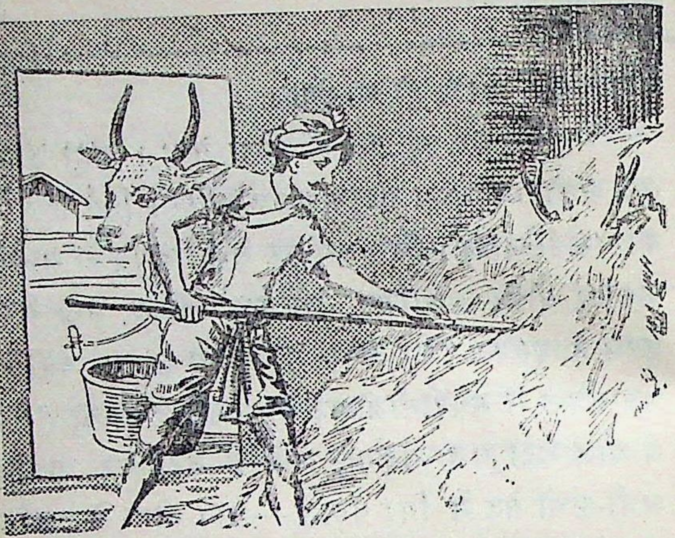

: १७ :

काम की देखभाल

एक बार रात में कुछ शिकारी कुत्तों ने एक बारहसिंगे का पीछा किया। बारहसिंगा भागता-भागता एक किसान की पशुशाला में घुस गया। वहां एक कोने में भूसे का ढेर लगा था। वह उसीमें छिपकर बैठ गया। कुत्ते कुछ देर तक बाहर भौंककर वापस चले गए। उसके जाने के बाद एक बैल ने बारहसिंगे से कहा---अरे भाई, तुम्हारे शत्रु तो चले गए, अब तुम निकलकर जा सकते हो।

बारहसिंगा ने उत्तर दिया---बैलजी, तुम्हारा क्या

बिगड़ता है, मैं तो यहां से अब दिन निकलने पर ही जाऊंगा। अंधेरे में दुष्ट कुत्तों से डर लगता है।

बैल फिर बोला--मेरा तो कुछ नहीं बिगड़ता, लेकिन यहां तुम्हें कोई देख लेगा तो बिना मारे न छोड़ेगा।

बारहसिंगे ने कहा--मैं ऐसा छिपा हूं कि मुझे इन्द्र भी अपनी हज़ार आंखों से नहीं देख सकता।

बैल--अच्छी बात है, तुम जानो।

बड़े सवेरे एक मज़दूर आकर वहां का गोबर साफ कर गया; दूसरा आकर सब जानवरों की नांदों में पानी भर गया और तीसरा आकर चारा-भूसा डाल गया। उनके जाने के बाद बाहरसिंगे ने बैल से कहा--देखा आपने, तीन-तीन आदमी आए, परन्तु एक भी मुझे यहां नहीं देख सका। अब मैं दिन चढ़ने पर ही यहां से जाऊंगा।

बैल ने कहा--मैं तो तुम्हें यही राय दूंगा, अभी अपने प्राण लेकर चले जाओ। ये तीनों तो मज़दूर थे, इसलिए जिस काम की मज़दूरी पाते थे, उसीको करके चले गए। इनकी आंखें अन्य वस्तुओं पर नहीं पड़ीं, क्योंकि यह काम को पराया समझकर उसकी ऊपरी देख-रेख करके ही छोड़ देते हैं। अभी हमारा मालिक

आएगा ; उसकी आंखें बड़ी तेज़ हैं, वह अपनी एक-एक चीज़ की ठीक-ठीक जांच-पड़ताल करेगा। छोटी से छोटी भूल को पकड़ लेगा। तुम उसकी आंखों में धूल नहीं झोंक सकते।

ये बातें हो ही रही थीं, इतने में किसान हाथ में लाठी लेकर पशुशाला का निरीक्षण करने आ पहुंचा। उसने एक-एक वस्तु पर दृष्टि डाली। इसके बाद भूसे के ढेर को इधर-उधर से देखकर वह अपने आप कहने लगा—मज़दूरों के भरोसे रहना ठीक नहीं है, उनकी आंख के आगे इतना भूसा नष्ट हो रहा था, लेकिन एक ने भी ध्यान नहीं दिया।

यह कहता हुआ वह भूसे को बटोरने लगा। उसी समय ढेर में उसे बारहसिंगे के एक सींग की नोक दिखाई पड़ी। वह समझ गया कि इसमें कोई जानवर घुसकर बैठा है, तभी भूसा बिखरा है। उसने लाठी से भूसे को हटाकर बारहसिंगे को देखा और तुरन्त मार डाला।

: १८ :

निर्लज्जता का दंड

एक बार मानसरोवर के हंसराज को अपनी कन्या के लिए वर का चुनाव करना था। उसने सारे पक्षियों को निमन्त्रण भेजकर बुलवाया। मोर, सारस, हंस, गरुड़, नीलकंठ और बगुले आदि नाना प्रकार के पक्षी सज-धजकर मानसरोवर के तट पर पधारे।

हंसराज ने सबका यथोचित सत्कार करके अपनी पुत्री से पूछा—बेटी, यहां बड़े-बड़े बलवान और रूपवान पक्षी विराजमान हैं; इनमें से तुम किसीको अपना पति बनना चाहती हो ?

हंस-कन्या ने सबको ध्यान से देखा। उसकी दृष्टि में मोर सबसे अधिक सुन्दर लगा। वह हंसराज से बोली—पिताजी, मैं तो इन्हींको अपना स्वामी बनाना चाहती हूं, मुझे इनका रूप-रंग अच्छा लगता है।

इसे सुनकर अन्य पक्षियों ने मोर को बधाई देते हुए कहा—मेघानन्दजी, आप धन्य हैं; हम सबके बीच में हंसराज की कन्या ने आपको ही सर्वश्रेष्ठ मानकर अपना स्वामी चुना है। आप बड़े ही भाग्यशाली हैं।

चारों ओर से अपनी प्रशंसा सुनकर मोर मुग्ध होकर भरी सभा में थिरकने लगा। उसे पंख फैलाकर नाचते देखकर हंसराज ने कहा—मैं इस नाचने वाले को अपनी कन्या नहीं दे सकता। इसका स्वर मनोहर है, पीठ, कंठ और पंख भी अति सुन्दर हैं, परन्तु शील नाममात्र को नहीं है। ऐसा निर्लज्ज मेरी सुशीला कन्या का पति होने योग्य नहीं है।

यह कहकर उसने एक सुन्दर हंस को चुनकर उसीके साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया। मोर के प्रशंसक ही उसकी हंसी उड़ाने लगे। वह सभा से चुपचाप पछताता हुआ चला गया।

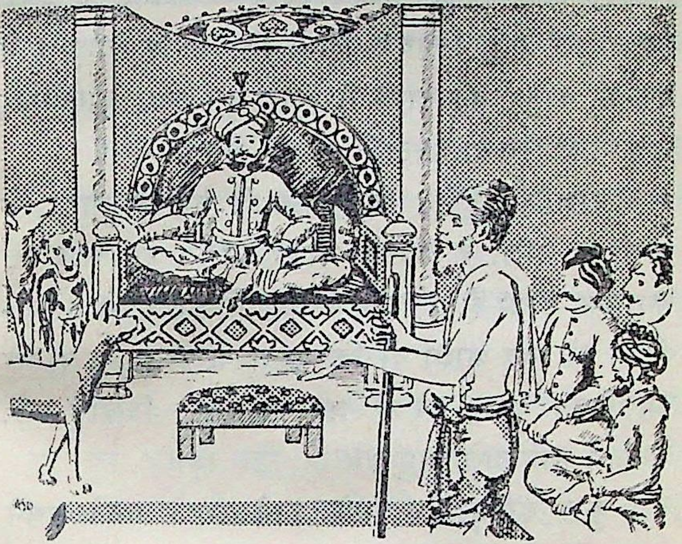

: १९ :

दंड कौन भोगे ?

एक बार एक राजा वन में शिकार खेलने गया। वहां से वह रात में लौटा और रथ को महल के बन्द अहाते में खड़ा करके स्वयं भीतर जाकर सो गया। रात में वर्षा होने के कारण रथ भीग गया। उसी समय महल के कुछ पालतू कुत्तों ने आकर उसकी गद्दी, लगाम और चाबुक आदि चमड़े की वस्तुओं को नोच-नोचकर खा लिया। सवेरे सेवकों ने राजा के रथ की दुर्दशा देखी। उन्होंने बहुत सोच-

विचारकर यह निश्चय किया कि फाटक बन्द होने पर भी बाहर की नाली से कुत्ते घुस आए होंगे और उन्होंने ही इसको काटा है।

राजा को तुरन्त यह सूचना दी गई कि बाहर से कुत्तों ने नाली के रास्ते भीतर आकर रथ के चमड़े को चबा डाला है। राजा ने क्रुद्ध होकर अपने सिपाहियों को यह आज्ञा दी कि महल के पालतू कुत्तों के अतिरिक्त राज्य-भर में जहां भी कुत्ते दिखाई पड़ें, तत्काल मार डाले जाएं।

कुत्ते ढूंढ़-ढूंढ़कर मारे जाने लगे। उनके बचने का कहीं भी ठिकाना न रहा। वे प्राण-रक्षा के लिए इधर-उधर वनों और श्मशानों की ओर भागने लगे। उनकी यह दशा देखकर एक महात्मा को दया आई। वे राजा के पास जाकर बोले—महाराज, इन जीवों को किस अपराध के कारण यह दण्ड दिया जा रहा है।

राजा ने कारण बता दिया। तब महात्मा फिर बोले—महाराज, जिन कुत्तों ने यह दुष्टता की है, क्या आप उन्हें जानते हैं?

राजा—नहीं।

महात्मा—तब दो-चार अपराधियों के लिए कुत्तों की सारी जाति को दंड देना उचित नहीं है। वास्तव

में जिसने अपराध किया है, उसीको खोजकर पकड़ना चाहिए।

राजा—चाहे एक ने यह काम किया हो या दस ने, काम तो कुत्तों का ही है। ऐसे दुष्ट जीवों को मरवा डालना ही ठीक है।

महात्मा—मैंने सुना है कि महल के कुत्तों को महाराज ने जीवन-दान दे रखा है।

राजा—हां, हां, वे मेरे पालतू कुत्ते हैं, उन्होंने रथ का चमड़ा नहीं खाया होगा क्योंकि उन्हें तो महल में योंही पेट-भर खाने को मिलता है। इसलिए मैं उनके ऊपर संदेह नहीं करता।

महात्मा—राजन, यह तो आप अनुचित पक्षपात कर रहे हैं। अपने कुत्तों को तो आप साधु जीव मानकर बचाते हैं और दीन-दुर्बल जीवों को दोषी मानकर मृत्यु के मुख में भिजवा रहे हैं। यह अन्याय है। आपको निष्पक्ष भाव से सबके साथ एक-सा न्याय करना चाहिए।

राजा—क्या आप यह चाहते हैं कि मैं अपने महल के कुत्तों को भी मरवा डालूं ?

महात्मा—नहीं, मैं अकारण किसी जीव को दंड दिलवाना नहीं चाहता। मैं तो यह कहता हूं कि जब

तक असली दोषी का पता नहीं लग जाता तब तक उस दोष के लिए सबको उत्तरदायी बनाकर दंड देना उचित नहीं है। इससे कितने ही निरपराध जीवों पर अत्याचार होता है। इसके साथ ही मेरा कहना यह है कि महल के कुत्तों के प्रति आपके हृदय में जैसा विचार है, वैसा ही सब कुत्तों के प्रति होना चाहिए। जब तक अपराधी का पता नहीं लग जाता, तब तक आप किसीके सिर कलंक कैसे मढ़ेंगे! न तो बाहर के सब कुत्ते बुरे हैं और न महल के सभी कुत्ते भले होंगे। सबकी निष्पक्ष जांच होनी चाहिए। संभव है, महल के कुत्ते ही दोषी निकलें।

राजा——नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता! मेरे कुत्ते ऐसा दुस्साहस नहीं करेंगे। यह बाहरी कुत्तों का ही काम है।

महात्मा——महाराज, बाहरी कुत्ते अहाते में कैसे घुसे होंगे? एक तो फाटक बन्द था, दूसरे चारों ओर पहरेदार खड़े थे। मुझे तो सबसे पहले आपके पालतू कुत्तों पर ही सन्देह होता है।

राजा——क्या आप किसी उपाय से इसका पता लगा सकते हैं?

महात्मा——आप महल के कुत्तों को यहां बुलवाएं,

उनकी परीक्षा तो हो ही सकती है।

राजा की आज्ञा से महल के सारे कुत्ते वहां लाए गए। महात्मा ने कुछ मट्ठा और दूध मंगवाकर दोनों को एक में मिलाया और उसे सभी सरकारी कुत्तों को पिला दिया। थोड़ी देर में सब उल्टी करने लगे। उनके वमन से चमड़े के टुकड़े बाहर निकले। उन्हें देखकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ।

महात्मा ने कहा—महाराज, देखिए असली दोषी तो ये हैं जो आपके विश्वासपात्र बनकर चैन कर रहे हैं और इनके कुकर्म का फल बेचारे निरपराध जीव भोग रहे हैं। भली भांति जांच-पड़ताल करके दोषी को ही दण्ड देना राजधर्म है। आपने उसका पालन उचित ढंग से नहीं किया, अतएव इस समय तो आप ही प्रधान दोषी हैं। अब मेरी सम्मति मानकर कुत्तों की हत्या बन्द करवा दीजिए और अपने आसपास के कुत्तों पर ही कठोर नियंत्रण रखिए।

राजा अपनी भूल को समझ गया। उसने उसी समय कुत्तों का वध बन्द कराकर अपने लोभी कुत्तों को महल से बाहर करवा दिया।

: २० :

निर्बल को न सताइए

किसी वन में एक बार एक शिकारी ने एक दुष्ट भेड़िए का पीछा किया। भेड़िया प्राण बचाने के लिए इधर-उधर दौड़ने लगा। चारों ओर ढूंढ़ने पर भी कोई छिपने का अच्छा स्थान दिखाई नहीं पड़ता था। शिकारी पीछे पड़ा हुआ था।

भागते हुए भेड़िये को रास्ते में एक ताल में एक हंस मिला। उसने रुककर उससे पूछा—परमहंस चाचा, मेरा काल मुझे खदेड़ता हुआ आ रहा है, बचने की कोई जगह बताओ।

हंस ने पास की झाड़ी की ओर इशारा करके कहा--वहां चले जाओ।

भेड़िया बोला--वहां एक हिरनी रहती है। एक बार मैंने बड़ी निर्दयता से उसके बच्चे को पकड़कर खा लिया था। आज वह बदला लेने के लिए शिकारी को मेरा भेद बता देगी। और कोई स्थान बताओ।

हंस ने एक टीले की ओर संकेत करके कहा--जाओ, वहां एक मुर्गा है, वह तुम्हें किसी खोह में छिपा देगा।

भेड़िया घबराकर फिर बोला--अरे वह मुर्गा तो मुझसे पुराना वैर रखता है। मैंने उसकी मां को मारकर खा लिया था। कोई शुभ स्थान बताओ, नहीं तो कुछ ही क्षणों में मुझे प्राण गंवाना पड़ेगा।

हंस ने तीसरी ओर इशारा करके कहा--देखो, उधर पेड़ के कोटर में एक चतुर खरगोश रहता है। उसकी शरण में जाओ। वह तुम्हारी रक्षा का उपाय बता देगा।

भेड़िये ने लम्बी सांस लेकर कहा--मेरे चाचा, उसका नाम न लो। मैं उसके भाई-बहनों को मार-मारकर कलेवा कर चुका हूं। आज वह भूलकर भी मेरे साथ उपकार न करेगा। शीघ्र कोई और स्थान बताओ--देखो, शिकारी आ धमका! अब वह तीर मारना ही चाहता है। उसके कुत्ते लपके चले आ रहे

हैं--हाय दादा ! किधर जाऊं--चाचा ! बोलो, बोलो··· काका, कुछ कहो···

हंस ने फिर कहा--अच्छा, उस ओर एक भालू रहता है; जाकर उसके घर में छिप जाओ ।

भेड़िए ने मुंह लटकाकर कहा--मैं तो कई बार उसके घर से उसका खाना चुरा चुका हूं । वह दुष्ट मुझसे बहुत रुष्ट है, अभी पकड़कर मुझे शिकारी के हाथों में दे देगा । ऐसा स्थान बताओ, जहां मुझे शान्ति और नया जीवन मिले ।

तब हंस ने कहा--भतीजे, अब सीधे मौत के मुंह में जाओ । तुमने संसार में चारों ओर सबसे वैर ही मोल ले रखा है । अब संकट में कौन तुम्हारी सहायता करेगा ! बलवान होकर जो निर्बलों को सताता है, उसकी एक दिन यही दशा होती है । अब तुम बच नहीं सकते । निर्बल जीवों की आहें तुम्हें चारों ओर से घेरकर खड़ी हैं ।

भेड़िया हंस को गाली देता हुआ आगे बढ़ा । इतने में पीछे से शिकारी ने एक तीखे बाण से उसको बींध दिया । वह दुष्ट छटपटाकर मर गया । कोई उसके नाम पर द[illegible]ी नहीं आया ।

◇ ◇ ◇

SPS
891.433 A 48 S
25623

सचित्र लोक-कथा-माला

लोक-कथाएं हमारे ज़ीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। प्रस्तुत लोक-कथा-माला में मनोरंजक तथा शिक्षाप्रद कथाएं सजीव और चटकीली भाषा में दी गई हैं। ये पुस्तकें स्त्री-पुरुष, बाल-युवा-वृद्ध ; सभी के लिए स्वस्थ मनोरंजन की सामग्री प्रस्तुत करती हैं। मोटा मोनो टाइप, बढ़िया कागज़, कलात्मक मुद्रण, बहुरंगे आवरण। इन सब पुस्तकों के लेखक हैं, श्री आनन्दकुमार।

नीति-कथाएं	१·२५
मनोरंजक कथाएं	१·२५
भारतीय कथाएं	१·२५
सदाचार की कथाएं	१·२५
महापुरुषों की कथाएं	१·२५
लोक-कथाएं	१·२५
अमर कथाएं	१·२५
शिक्षाप्रद कथाएं	१·२५
आदर्श कथाएं	१·२५
जातक कथाएं	१·२५

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली–६